जहां अब नौगांव की छावनी आबाद है युद्ध स्थान नियत हुआ दोनों ओर के शस्त्रधारी बीर योधागण अपने २ शत्रु रक्त पियासे शस्त्रों को देखते एक दूसरे को तुच्छ समझते (मैदान में) रण भूमि में आये। यहां भी अस्त्रों का अनादर और शस्त्रों का आदर रहा। प्रातःकाल से दो पहर पर्य्यन्त खूब लोहा झड़ा। मध्यान में राजा नन्द बीर बलदाऊ के कटार से घायल होकर गिर पड़ा और मुसलमान सेना भी बुन्देलों का लोहा सहने में असमर्थ होकर भाग उठी। धन्य क्षत्रियों असिधारा से न डरना केवल तुम्हारा ही काम है। बन्दुक तो स्त्रियें भी चला लेती हैं।

शाहकुली यहां से हट कर आलीपुर के पास जा ठहरा। साज समाज सब चल दिया दो दो चार २ आदमी पहाड़ियों पर ठहर रहे सो इस विचार से शिकार वगैरह खेलने में बीर छत्रसाल पर हाथ लगाऊं। परन्तु आप खुद बीर छत्रसाल जी के शिकार बन बैठे। एक दिवस अर्ध रात्रि को सौ बुन्देला सवारों ने यही जङ्गल जा खेला और सब मीर मिर्जा तो हिरन चौकड़ी फांद कर निकल भागे परन्तु शाहकुली कुली बनाकर मउ में लाया गया यहां पर जो कुछ ८००० हजार का नेवर था। देकर विनीतिभाव से विनती करके प्राण बचाये। बीर छत्रसाल जी का दिल्लीपति यवन सम्राट के विपक्ष में यह अन्तिम युद्ध था।

इधर बीर छत्रसाल जी ने शाहकुली को कुली बनाया उधर औरंगजेब आलमगीर ने अहमद नगर में खट्टा खाया। और वहां से लौटते हुए सन् १६८७ ईस्वी संवत १७४४ में बहादुर शाह को बादशाह करके इस संसार से कूच कर गया।

श्यामलाल कृत बुन्देलखण्ड की तारीख़ में औरंगजेब की मृत्यु का सन् १११८ हिजरी लिखा है और इस में ५६९ वर्ष जोड़ने से १६८७इस्वी सन्होत है। उधर महाराज छत्रसाल जी के राज्य तिलक का संबत १७४४ लिखा है और यह भी लिखा है कि छत्रसाल जी ने ३८वर्ष की आयु में महाराज पदवी धारण की (छत्रप्रकास में) सोयों भी १७०६ में ३८ जोड़ने से १७४४ होते ही और इस में ५७ घटाने से १६८७ सन् बनते हैं अंग्रेजी तवारीखों में औरंगजेब की मृत्यु का सन्-१७०७ दिया है परंतु मुझे जिन पुस्ककों से संबन्ध था उन्हीं का संबत मै ने लिखा है अस्तु निर्णय आप कर लीजिये ।

सम्राट औरंगजेब का देहान्त हो जाने के पश्चात इन का दूसरा पुत्र बहादुर शाह अपने भाइयों से लड़ भिड़ कर दिल्ली में तख़्तनशीन हुआ किन्तु इस समय मुगल बादशाहत बहुत कमज़ोर हो गई थी। मरहटों का इक़बाल बलन्द था। इस लिये सम्राट के प्रधान मन्त्री नबाबखानखाना बहादुर वज़ीर आज़मने इधर छत्रसाल जी से रार ठांनना उचित न जान बादशाह से चम्पतराय जी की प्रशंसा की और दाराशिकोह के समय में उन का सरकारी खैरख्वाह रहना वा जागीर पाना बता कर बीर छत्रसाल जी की बीरता की प्रशंसा की । और अर्ज की कि जहां पनाह लोहागढ़ का किला जो मुद्दत से दुश्मनों के हाथ में है अगर इरशाद हो तो छत्रसाल जी को वहां भेजा जावे। उम्मेद है कि वह कट्टर राजपूत ज़रूर फ़तह-याब होगा। इस बात पर बादशाह ने भी एवमस्तु कह दिया। बादशाह की इजाज़त पा कर नवाव खानखाना ने बीर छत्रसाल जी को एक पत्र, जिस में सम्राट प्रति अपना

परामर्श लिखकर भेजा। बीर छत्रसाल जी ने यह पत्र पाकर उत्तर दिया कि मैं यहां से जाकर लोहागढ़ फ़तह कर के तब दरबार शाही में हाज़िर आऊँगा, किन्तु बादशाह के दुतीय अनुरोधानुसार छत्रसाल जी दिल्ली को गये। वहां पर उनका जैसा कुछ राजा महाराजाओं का चाहिये, उचित सत्कार हुआ। बादशाह के दरबार में उचित आसन मिली और तब संम्राट बहादुर शाह ने स्वयं अपना खड्ग बीर छत्रसाल जी को देकर उन्हें लोहागढ़ पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। निदान बीर छत्रसाल जी सेना सहित लोहागढ़ पर चढ़े और वह संरक्षित विकट दुर्ग जो बादशाही सेना से महीनों में परास्त न हुआ था एक दिनमें उन के हांथ आया। लोहागढ़ फतह कर के बीर छत्रसाल जी शाहजहांनाबाद में आकर बहादुर शाह से मिले। तब बहादुरशाह ने अत्यंत प्रसन्न होकर बीर छत्रसाल जी से कहा कि आप शाही दरबार में रहना मंजूर कीजिये और मनमानी जागीर लीजिये; किन्तु इन्होंने यह बात स्वीकार नकी और उत्तर दिया कि ईश्वर ने मुझे निज बाहुबल से अर्जित दो करोड़ की भूमि दे रक्खी है बस मेरे लिये वही अधिक है। आप की केवल कृपा दृष्टि चाहता हूं और जब जो आज्ञा होगी सो करने को प्रस्तुत हूं॥

संबत १७५० में बीजापुर से एक यवन सरदार पन्ना पर चढ़ आया। उसने महाराज से यह प्रण किया था कि जो कुंड़िया नदी से युद्ध करते २ मैं धर्मसागर (तालजो पन्ना ग्रामके दक्षिण में हैं) जाल अपने घोड़े को पिला लूंगा तो आप को पन्ना छोड़ देना होगा। निदान युद्ध आरंभ हुआ और उसका

एक भाई बेनीसागर ताल पर मारा गया, परंतु वह बढ़ता ही आया। तब महाराज छत्रसाल जी ने उसे स्वयं अपने हाथ से धर्मसागर से १ जरीब के फासले पर मारा। इन दोनों भाइयों की कबरें अब तक पन्नामें, जिस २ स्थान में वंह मारे गये थे, बनी हुई हैं।

महाराज छत्रसाल जी के समय में फरुक्खाबाद के हाकिम बंगस से अंतिम युद्ध, सन् १७२६ इस्बी संबत १७८३ में हुआ। बंगस ने आकर जैतपुर के किले पर आक्रमण करके उसे अपने कब्जे में कर लिया और देश में बहुत उत्पात मचाया। बुन्देलों के दल बदुल को दो बार मार भगाया। तब महाराज छत्रसाल जी ने एक पत्र पूना के पेशवा बाजीराव को सहायतार्थ लिखा। उसमें उन्होंने यह दोहा लिखा था। 'जो गति भइ गज ग्राह की सोगति अपनी आइ। बाजी जात बुन्देल की राखो बाजी राइ'१ इस पत्रको पाकर बाजीराव पेशवा दो मिजला कूच करते हुए १७दिनमें पूना से जैतपुर आये। तब बुन्देलों और मरहठों का एक दल देख कर बंगस स्वयं किला छोड़ कर भाग गया। इस सहायता के पारितोषिक में महाराज छत्रसाल जी ने भेसल में पाई हुई मुस्तरी की लड़की मस्तनी बाजीराव जी को दी और अपना तीसरा पुत्र मान कर उन्हें अपने राज्य में तीसरा हिस्सा भी दिया। सागर वगैरह मरहठों को छत्रसाल जी के दिये हुए हैं। बाजीरावको मस्तानी से एक पुत्र हुआ जिसका नाम शमशेरबहादुर था। वह बांदा का जागीदार नबाब पदवी से अलंकृत हुआ। इस उपरोक्त युद्ध में महाराज छत्रसाल ने शस्त्र ग्रहण नहीं किया। केवल आपके दोनों पुत्र से यह युद्ध हुवा ताथापि आपके वर्तमान समय में

होने और पेशववों को राज्य में हिस्सा दिये जाने का स्पष्ट कारण होने, तथा नबाब बांदा के उत्पत्ति दर्शक कारण होने से इस बार्ता का उल्लेख यहां किया है ।

दिल्लीपति संम्राट औरङ्गजेब की मृत्यु के पश्चात् बीर छत्रसाल जी के दैनिक युद्ध का भी निर्वाण हुआ ।

संवत १७४४ कि (सन् १६८७ ई०) (हिजरी सन् १११८) में ३८ वर्ष की अवस्था में महाराज छत्रसाल जी ने काशी कश्मीर इत्यादि के पण्डितों को बुला कर यथावत शास्त्रोक्त रीति से तिलक कराय छत्रधारी महाराज की पदवी धारण की।

महाराज छत्रसाल जी जैसे बीर और दृढ़ प्रतिज्ञ थे वैसेही, सत्कर्म, धर्मशील, सौजन्य, परोपकार, गुरु आज्ञा पालन, जितेन्द्रियता, सौहृद्य, भ्रातृस्नेह, स्वदेश प्रेम, और स्वजाति भक्ति इत्यादि समस्त शुभ गुणों से भी भलीभांति भूषित थे । जिन का विवरण क्रमशः संक्षेप से अग्रिम पृष्टों में लिखा जायगा ॥

इस समय महाराज छत्रसाल जी का राज्य दक्षिण में नर्मदा,, उत्तर में यमुना, पूर्व में टौंस और पश्चिम में चंवल नदी तक था । आप के राज्य में समस्त प्रजा सुखी और प्रसन्न थी । समस्त प्रजावर्ग आप को साक्षात अपने पितृवत् मानते और देवतावत् पूजते थे । और आप भी अपनी प्रजा को पुत्र से कम नहीं मानते थे । इस के प्रमाण अब तक भली भांति पाये जाते हैं ।

यह मैं लिख ही चुका हूं कि महाराज बहुत दिन से मउ में निवास करते थे इसी मउ के दो मील पश्चिम में

आपने निज रहाइस के महल बनवाये, और कुछ बस्ती भी बसाई। नाम इस स्थान का महेवा रक्खा। ज्ञात होता है आप ने अपनी जन्मभूमि का नाम चिरस्थाई रखने के निमित्त यह महेवा आवाद किया था। यद्यपि आप महेवा में निवास करते थे, परंतु सब लावलशकर सेना और राज्य-कीय वस्तुयें तथा रनवास मऊ में ही रहा करते थे। महाराज जब कब जाकर पन्ना में भी कुछ दिन रहा किये हैं। उस समय (इँगाई) बुन्देलखण्ड की राजधानी "मउ महेवा" थी और इहां के नाम से लिखन पढ़न इत्यादि भी होती थी जैसा कि महाराज छत्रसाल जी की सनदें में देखा गया है

महाराज छत्रसाल जी के वर्तमान समय में मउ और महेवा की एक बस्ती थी। तथापि यों कहना चहिये कि उस समय मउ का बिस्तार ५ मील के लगभग था, यहां उत्तम २ बिद्वान वा बड़े २ धनाढ्य तुरुष रहते थे। अधिक कहने मे क्या प्रयोजन ऐसे धर्मज्ञ महाराज की राजधानी में भला किस वस्तु की त्रुटि होना संभव है। हाय! परन्तु काल चक्र भी कैसा प्रबल है कि ऐसा राज्यस्थान मउ अब केवल १००० मनुष्यों के रहने की बस्ती रह गया है। न वे ५२गढ़ीं है न कुछ चमत्कार है परन्तु केवल उन के चिन्ह मात्र एक समय में उन बस्तुओं की स्थित का परिचय दे रही है। महाराज छत्रसाल जी का निवास स्थान महल भी खड़हर हो गये हैं। ये महल फाटा पहाड़ की खोह में अबलों हैं। और बादल महल के नाम से प्रसिद्ध हैं। ताल के ऊपर जो महल हैं, वे महाराज अमानसिंह के हैं। वे महल भी टूट फूट गए थे परंतु अब श्रीमान महाराज धिराज परमबंश।वतंस श्री १०८ महाराज बिश्वनाथ

सिंह जू देव छत्रपुराधिप ने महल-मउ का जीर्णोद्धार कराया है। करीब आधे के महल बन चुके हैं। महलों के द्वार पर सुन्दर उद्यान बनवाया गया है । पिछवाड़े *ध्रुव सागर ताल में सुन्दर श्वेत और हजारा दो प्रकार के कमल शोभा देते हैं। तात्पर्य्य यह है श्रीमान ने इस प्राचीन स्थान को फिर से भी नवीन कर दिया है।

शील सौजन्य

महाराज छत्रसाल जी अपना दृढ़ राज स्थापित करके प्राजापालन करने लगे। तब एक समय का वृत्तांत है कि आप मऊ में महलों के ऊपर छत पर विराजमान थे। ठाकुर, मुसाहिब, भाई बन्धु, महाजन, भलेमानुस सब लोग उपस्थित थे। राह में कुछेक दूर महलों की ओर आती हुई एक बैलगाड़ी दृष्टि पड़ी कि जिस पर एक अतीव वृद्धपुरुष बैठा हुवा था। उसे देखते ही महाराज ने सब सभासदों को सुना कर कहा कि देखो वह वृद्धपुरुष, मेरे बल्यवस्था का सहायक आरहा है। उसे यहां तक ऊपर सीढ़ी चढ़ने में दुःख होगा। चलो उससे वहीं साक्षात करें। निदान जब तक वह गाड़ी महल के दरवाजे आई तब तक महाराज भी नीचे पहुंच गए और स्वयं गद्गदकंठ से बोले "वली कक्का अच्छे तो हैा। आहा! इस कंठ स्वर को चीन्ह कर बूढ़े से न रहा गया! वह ढांढ़ मार कर रो उठा। वह बोला महाराज! मेरा सा भाग्यवान और सुखी कौन होगा जो आप को इस अवस्था में देख रहा हूं! तब महाराज ने उसे अपने पास रक्खा और सब सरदारों में

*इस ताल को इस समय धुवेला ताल कहते हैं।

बूढ़े के सन्मुख अपने मानने से से महेवा को जाने और उस शूद्र से सहायता पाने का वृत्तान्त सुनाने लगे । उन्होंने बूढ़े से प्रश्न किया कि अब तुझे क्या चाहिए। तब उसने निवेदन किया कि आप जब मुझ को कक्का कह चुके तो अब मुझे संसार में क्या वस्तु पानेको रही परंतु इतना केवल चाहता हूं कि जैसा मान मेरा आपने अब रक्खा एसा नाम मेरा मरने पर भी चले। निदान महाराज छत्रसाल जी ने उसी समय राज्य भर में ढिंडोरा फिरवा दिया कि अब से मेरे प्रजागण मुझे केवल छत्रसाल न कह कर 'छत्रसाल महाबली' कहा करें । पाठक महाशय ! बिचारिये तो सही क्या यह शील सौजन्य प्रत्येक मनुष्य में पाया जा सक्ता है? क्या यह शील सौजन्य, सच्चित श्रोताओं के हृदय में अनन्द, शरीर में रोमाञ्च, और क्षत्रियों के चित्त में लज्जा और ग्लानि और आप (छत्रसाल) की संतान के हृदय में पूर्ब पुरुषओं की कीर्तिका अभिमान उपजानेवाला नहीं है ! सुजन छत्रसाल जी आपको धन्य है!!!

॥ जितेन्द्रियता और आत्मशक्ति ॥

यवन बादशाही के उपद्रव से एक कवि दिल्ली से आकर मऊ में निवास करने लगा था। दैव योग से, वह कवि युवा वस्था ही में पर लोक बासी हो गया । उसकी नवयोवना सर्बाङ्ग सुन्दरी स्त्री पति बियोग से बिह्वल हो गई। किंचित्काल पर्य्यान्त तो उसने अपने दिन व्यतीत किये । परंतु अंत में उसे कामदेव के पञ्चबाणों ने प्रहार करना आरंभ किया। एक तो काम की प्रेरणा, दूसरे रसिक कबि की स्त्री भला कैसे धैर्य्य रख सके। बहुत कुछ सोच बिचार कर उसने महाराज छत्रसाल जी को निम्न लिखित आशय का एक पत्र लिखा ।

श्रीमान्,

सर्वगुण निधान, प्रजापालक, यवन कुलघालक

श्री १०८ महाराज छत्रसाल जी !

सष्टाग प्रणाम निवेदन करने पश्चात् सविनय प्रार्थना करती हूं कि आप के राज्य में समस्त प्रजा सुखी और आनन्द में है। आप प्रजा के सुखी रखने के निमित्त राज्य में सर्वोत्तम रीति से प्रबंध करते हैं। परंतु हाय! यह अभागिनी तिस पर भी अति दुखी है। इस हेतु यदि श्रीमान् इस दासीके स्थान पर पधारने का श्रम स्वीकार करें तो बड़ी कृपाहो और तब मैं अपना दुःख कह सुनाऊं और प्रबल व्यथा से अपने पिंड छुड़ाऊं।

आपकी--कृपाभिलाषिनी !

दासी (प्यारी बाई भटिन)

इस पत्र से महाराज के मन में नाना प्रकार के संकल्प विकल्प उत्पन्न होने लगे। कि हे देव! इसे क्या हुआ हैं! यह तो सब प्रकार अन्न धन इत्यादि से परि पूर्ण है! हो नहो इसे कोई दुष्ट कुदृष्टि से देखता है तभी यह इस प्रकार दुखी है। अन्यथा नहीं और पत्र लेकर आनेवाले को उत्तर दिया "अच्छा।

शायंकाल के समय महाराज छत्रसाल जी जब सवारी को गये तो उसी स्त्री के दरवजे घूमते फिरते जा पहुंचे। उसने (भटिन) ने बड़े आगत स्वागत से महाराज को लिया और बिनती की कि मैं अपनी विथा एकन्त में निबेदन करूंगी। ऐसा कह कर वह महाराज को अपने चित्रसारी मे लेगई और वहां पर

कहा। महाराज! मैं अनाथिनी अबला हूं, मेरे पास यह धन स्वर्ण सब कुछ है परन्तु काम मुझे अत्यन्त सताता है इसी से चित्त कल नहीं पाता।। सो हे नाथ! इस अनाथनी को पुत्र दान दीजिये।। मैं आप ऐसा बलवान पुत्र चाहती हूं। अन्यथा मेरा जीवन संसार में व्यर्थ होगा तथापि मैं अपना प्राण त्याग दूंगी। इस प्रकार उसका दुष्ट बिचार देख महाराज मन ही मन सोच बिचार करने लगे कि हाय अब कैसा हो। मैं समस्त प्रजा को पुत्रवत् स्त्रियों को कन्यावत् मानता हूं। कैसे इसके साथ श्लील व्यवहार करूं। रूक्ष उत्तर देने से यह स्त्री कहीं सचमुच प्राण देदे तो भी कुछ न बने। बहुत कुछ बिचारने के पश्चात् महाराज ने कहा अच्छा तू मुझसा पुत्र ही चाहती है या और कुछ। उसने उत्तर दिया जब आप सा पुत्र मेरे होगा फिर क्या वस्तु पाने को संसार में बाकी रहेगी। तब महाराज छत्रसाल जी ने उसी दम उस के दोनों कुच कलश अपने मुहमें लेलिए और हाथ जोड़कर निवेदन किया कि माता मैं तेरा पुत्र हूं क्या आज्ञा है? इसपर उस (भाटिन) का चित्त भी वैसाही होगया और उसी दिन से वह महलों में छत्रसाल जी के मातावत रहने लगी। उस का जो २००००००० दो करोड़ का धन था उस से महाराज ने मऊ के गिर्द शहर पनाह बनवया जो अब भी कुछ कुछ बना हुवा है। क्या यह आत्म शक्ति की प्रबल ता नहीं है--कि क्षण मात्र में दूसरे के विरुद्ध विचार को अपने सा कर ले?

महाराज ने अपनी रयासत में यह भी ढिंढ़ोरा पिटवा दिया था कि बुन्देलखण्ड की लड़की बुन्देलखण्ड ही में व्याही हो तो महाराज के साम्हने मुह न ढांके। आप का कथन था कि समस्त प्रजा मेरे पुत्र पुत्रीवत हैं। तब जस से जो नाता मानना उस से वैसा ही व्यवहार करना उचित है।

नम्रता और उदारता।

संवत् १७४८ में, जब कि महाराज छत्रसाल जी पन्ना नगर में विराजमान थे। आप का नाम और यश श्रवण करके कवि भूषण त्रिपाठी टिकमापुर जिला कानपुर निवासी, शिवा जी के पुत्र साहू जी से २५००० रुपया, पांच हाथी तथा और वस्त्र आभूषण भेंट में पाकर पन्ना को पधारे। इन के आगमन का समाचार जब महाराज छत्रसाल जी को मिला तब वे मन ही मन विचार करने लगे कि इस कवि को क्या दूं? ऐसे पुरुषों को धन वस्त्र भूमि इत्यादि देने से क्या? इन्हें कुछ एसा देना उचित है कि जिसे न तो वे आजन्म भूलें और मेरा यश संसार में चिरस्थाई हो। निदान कवि जी की आगननी को महाराज सैन्य सहित गाजे बाजे से पधारे। जब नियत स्थान पर पहुंचे तो आप अपने हाथी पर से उतर कर एक ओर खड़े हो गये। भूषण कवि पालकी में सवार थे और उन का नाती घोड़े पर सवार आगे आगे आ रहा था। महाराज छत्रसाल जी ने प्रथम उस से मिल कर उसे अपने हाथी पर सवार कराया। और तब आप ने जाकर कवि भूषण की पालकी में कन्धा दे दिया। यह देख कर कवि जी ने तुरन्त पालकी से उतर कर महाराज का हाथ पकड़ लिया और कहा राजन् धन्य हो!! और उसी समय यह दोहा पढ़ा॥

दोहा–नाती कों हाथी दियो, जापर ढुरकत ढाल।
साहू के जस कलस पर ध्वज बांधी छत्रसाल॥

कवित्त।

राजत अखण्ड तेज भाजत सुयश बड़ो, गाजत गयन्द

दिग्गजन हिये शाल को। जाके परताप सें मलिन आफताब होत ताप तज दुज्जन करत बहु ख्याल को॥ साज सज गज तुरी कोतल कतार दीन्हें, भूषण भनत एसो दीन प्रतिपाल को। और राजा राव मन एकहूं न ल्याऊं अब काहू को सराहूं का सराहूं छत्रसाल को॥

वहां से महाराज छत्रसाल जी और कबि भूषण महाशय दोनों खास महलों तक पांय प्यादे आये। पन्ना में भूषणजी एक साल पर्य्यंत रहे। इन्होंने महाराज की प्रशंशा में और भी काव्य की है जिसका उल्लेख नीचे किया जाता है।

कबित्त

भुज भुजगेश कै वे संगनी भुजंगिनी सीं, खेद खेद खाती दीह दारुण दलन के॥ बखतर पार बरनि बीच धसजात मीन पैर पार जात परवाह ज्यौं जलन के॥ रैया राव चंपत के छत्रसाल महाराज भूषण भनत को वखानिबो बलन के॥ पक्षी परछीने एसे परे परछीने बीर तेरी वरछी ने वरछीने हैं खलन के॥१॥ चाक चक चमूके अचाक चक चहूं ओर चाकसी फिरत धांक चंपतके लाल की॥ भूषण भनत बादशाही मार जेर करी काहूं उमराव ना करेरी कर बालकी। सुन २ रीति विरदैत के बड़प्पन की थप्पन उथप्पन की रीति छत्रसाल की। जंगजीत लेवा ते ह्वै के दामदेवा भूप लागे करन सेवा माहेवा महिपाल की॥–दोहा वेदेखो छत्तापता ये देखो छत्रसाल। वे दिल्ली की ढ़ाल ये दिल्ली ढ़ाहन वाल॥ १॥ इक हाड़ा बूंदी धनी मर्द महेवा वाल। सालें औरँगजेब को यह दोनों छत्रसाल॥२॥

महाराज छत्रसाल जी का इस प्रकार सहित्य प्रेम दातव्य प्रति नेम और उज्जल उदारता का यश सुन कर दूर २ के कवि महाराज के दरबार में आए और उन के गुण गाए।

पुरुषोत्तम कवि

कवित्त

कवि पुरुषोत्तम तमासे लग रहे मान, बीर छत्रसाल अद्भुत युद्ध ठाटे हैं। नारद नरेस के सवारद रजपूत लड़ें मारें तरवारें गज बादर से फाटे हैं॥ सिंधुलोहू कुंडन गगन झुण्डा झुण्डन सों रिपु रुण्डा मुंण्डनसों सब घट पाटे हैं। चरबी चखैयन के परबी समर बीच गरबी मगरबी ते करबी से काटे हैं॥ १॥

पंचम कवि

कवित्त

कीबो समान ढूढ़ देखे प्रभु आनिये निदान दान जूझ में न कोऊ ठहरात हैं। पंचम प्रचंड भुज दंड के बखान सुनि भागबे को पक्षी लों पठान थहरात हैं॥ शंका मानि कंपत अमीर दिल्ली वाले जब चंपत के नंद के नगारे घहरात हैं॥ चहूंओर ताके चकत्ताके दल ऊपर छत्ता के प्रताप के पताके फहरात हैं॥ १॥

लालमनि कवि,

कवित्त

लीन्हो देश दक्षिण तैलंग करनाट बड़ो औरंग जैतवार जंग रन के जवाल को॥ विरच्यौ महेवावार रेवा लौ दवायो देश धायो फिरै चक्र जोर जाको यों कृपान को॥ लालमनि कहै यों दिनेस लों प्रताप ताको होचलो अमल राव चंपत के लाल को। बद्दल की छाह लौ उरल बादशाही चलौ फैल चलो भानसौ प्रताप छत्रसाल को॥ १॥

सवैया

नहि तात न भ्रात न साथ कोऊ, नहिं द्रव्यहु रंचक पास

हती । नहिं सेनहु साज समाज हती अरु कहु सहाय जराहु नती ॥ कर हिम्मत किम्मत आपनी सों सु लई धरती औ बड़ाई रती । बलभद्र भेर्ने लख पाठक वृंद हिये में गुनों छत्रसाल गती ॥ १ ॥

बरवै—निज हिम्मत किम्मत सों, यवन बिडाल ।
भे गरीब सों राजा, धन छत्रसाल ॥ १७ ॥

महाराज छत्रसाल जी के दरबार में जो कवि कोविद पण्डित गुणी विद्वान आया मालामाल हो कर गया । यह महाराज कवि लोगों के जैसे कल्प वृक्ष गुणग्राहक साहित्य के निपट चाहक शिरोमणि उदार चित्त थे वैसे ही स्वयं कविता में निपुण थे । महाराज छत्रसाल जी का बनाया कृष्णचरित्र नाम ग्रन्थ अति उत्तम और रसमय है । आपने अपनी निज बंशावली आदि बुन्देला पुरुष पंचम सिंह से लेकर अपने तक छंद बद्ध बर्णन की है जो छत्रप्रकास नाम से प्रसिद्ध है ।

एक बार ओरछे से मसखरी की तौर पर वह पद लिखा आया "ओरछे के राजा अरु दतिया की राई । अपने मुंह छत्रसाल बनें भनाबाई" ॥ इसके उत्तर में महाराज ने निम्न कवित्त लिख भेजा था ॥

कबित्त

सुदामा तन हेरे तब रंकहू ते राव कीन्हों विदुर तन हेरे तब राजा कियो चेरे से । कूबरी तन हेरे तब सुंदर स्वरूप दीनों द्रोपदी तन हेरे तब चीर बढ्यौ टेरे से ॥ कहत छत्रसाल प्रह्लाद की प्रतिज्ञा राखी हिरनाकुस मारो नेक नजर के फेरे से । एरे अभिमानी गुरुज्ञानी भयें कहा होत नामी नर होत गुरुड़ गामी के हेरे से ॥ १ ॥

महाराज छत्रसाल जी की रानी कमलापती बड़ी विद्वान और कविता रस को जानने वाली थीं। एक समय जब कि महाराज रयासत में दौरे पर गये हुए थे, एक भगवत नाम कवि मऊ में आये। यह कवि बहुत दिन तक पड़ा रहा और महाराज न आये न इन की जाहरी महारानी जी के यहां भी न हुई तो इसने महलों के दरवाजे जाकर जोर से यह दोहा कहा।

दोहा कल भगवत चलिये जहां, शीतल झिरियन नीर
बड़ो समुद का सेइये, प्यासन मरिये तीर ॥ १ ॥

भाग्यवश महारानी कमलापती दरवाजे की गोख में विराजमान थीं। कवि का यह दोहा सुनकर आपने ५००) की एक अगूठी और साथ में यह दोहा लिख कर कवि के पास भेजा ॥

दोहा भगवत गति जानी नहीं का झिरियन कौ नीर।
बड़ो समुदना छोड़िये, निकसत रतन गंभीर ॥ १ ॥

सहन शीलता

एक समय महाराज छत्रसाल जी अपने बन्धु बांधवों वा पुत्रों सहित शिकार खेलने पधारे। इनके एक ओर इनका एक मोहनसिंह नाम पुत्र जिस की जागीर श्रीनगर थी, चलाजा रहा था। दूसरी ओर बलीखांन के चचेरेभाई गाजी साह जा रहे थे। निदान इन दोनों में वादाविवाद हो उठा। होते २ मोहनसिंह कह उठा कि यही वह जगह है जहां गाजी की भाजी सी बनाई गई थी। इस अपमानित वचन को सुन कर गाजीशाह से न रहा गया और उन्होंने उत्तर दिया हां यहींपर छत्ता के लत्ता लिये गये थे और महाराज छत्रसाल

जी से क्रोधित होकर बोले कि आप अपने लड़के को रोको नहीं तो हम मार देंगे । इस चरित्र पर महाराज ने मुस्करा कर यही उत्तर दिया कि क्या लड़कपन देते हो !" और मोहनसिंह को अपने साथ से लौट जाने का अनुरोध किया ॥

न्यायचातुर्य्य

मउ में एक दिवस महाराज छत्रसाल जी मोती बाग में टहल रहे थे । कि एक बनजारे ने आकर पुकारा । महाराज के ऐसे शांतिमई राज्य में ऐसा उपद्रव ! हाय लुट गया" महारज ने उत्तर दिया क्या है कहो । तब उसने शांतचित्त से प्रार्थना की कि मेरा वृतांत बहुत है दत्तचित्त होकर मुझे निकट बुला कर एकांत में सुनिये । तब महाराज छत्रसाल जी ने उस व्यापारी को अपने निकट बुलाया और उसके विनयानुसार अपने सभासदों से पृथक एकांत में उसकी प्रार्थना सुनना आरंभ की ॥

वह व्यापारी अति दीन भाव से अष्टांगप्रणाम कर बोला कि महाराज मैं जैसलमेर का रहने वाला ज्ञात का वणिक हूं यहां आये मुझे आज आठवां दिवस है । एक वर्ष व्यतीत हुवा कि आपके नगर के रहने वाले जोगी मेरे रहने के गांव में परिभ्रमण करते हुए पहुंचे और मेरे प्यारे पुत्र की स्त्री अर्थात मेरी बहू को न जाने किस प्रकार वहां से चुरा लाये । हम लोगों ने बहुत कुछ तलाश किया ; किन्तु कुछ भी पता न चला । निदान हम लोग निराश होकर बैठ रहे । श्रीमान हम लोग नमक की लाद का व्यापार करते हैं । इसी से अपने बैलों को लादे हुए इधर उधर ग्राम २ नगर २ परिभ्रमण करते हुए यहां आये । हमारा डेरा आपके नगर के पश्चिम ओर है । परसों के दिन

क्या देखता हूं कि पास वाले कुवां पर एक स्त्री, ठीक मेरी बहू की नाई, जल भर रही है। उसे देख कर मुझे अपनी खोई हुई बहू की सुधि आगाई और मन में आया कि उस से कुछ बार्ता लाप करूं; परंतु श्रीमान् के धर्मराज्य में परस्त्री से वार्ता करना उचित न जान कर मैं निस्तब्ध रहा। परंतु वह स्त्री स्वयं मेरी ओर आ रही थी तब मुझे और भी आश्चर्य्य हुआ। मरे पूर्व शोक का भी पुनर्वार हृदय में संचार होने लगा। क्षण मात्र में वह मेरे निकट आई और विषादाश्रु-जल श्रवित नेत्रों से मुझ से बोली कि हे काका जी यह अभागिनी आप की बहू है। मुझे यह जोगी चुरा लाये हैं। हाय! मैं ने न जाने क्या पाप किया था कि मुझे आपके चरणों से विछोह हुआ। यद्यपि में आपकी सेवा करने योग्य अब नहीं रही हूं, मेरा सतीत्व धर्म नष्ट हो गया है, किन्तु यह परवश है इस हेतु आशा हैं। कि आप कृपा कर के मुझे इस कष्ट से मुक्त करावेंगे। मुझे अपने घरमें दासी की नाईं रहना स्वीकार है। वहां घर पर आपके अथवा आपके पुत्रके चरण कमलोंके दर्शन तो होगें॥

तो मैंने कहा कि अच्छा वत्से चलो, किन्तु उसने उत्तर दिया कि काका जी एसी चलने में न बनेगा, वह जोगी बड़े निष्ठुर हृदय और यंत्र मंत्र तंत्र शस्त्र के ज्ञात हैं। मुझे इस प्रकार लेजाने में आपका स्ववश-नाश होगा। इन दुष्टोंने इसी प्रकार अनेक स्त्रियों का सतीत्व नष्ट किया और सैकड़ो घर धूर में मिलाये हैं। वरन आप एसा कीजिये कि यहां के नरेश श्रीमान् बुन्देलवंशावतंस से अपनी विपति कहानी निवेदन कीजे। वह दयामय नृपति अवश्य इस विषय पर

ध्यान देंगे और मुझे इस अपत्ति से मुक्त करेंगे। परंतु इस बात का ध्यान रहे कि इस वार्ता को सर्व साधारण के सुनने में अतीव विपत्ति की आशंका है। मेरे प्राण जावेंगे आपके ससमाज प्राण जावेंगे और आश्चर्य्य नहीं कि यह दुष्ट किसी प्रकार राज्य को भी हानि पहुचावेंगे। हे नाथ जो कुछ था निवेदन किया अब जो उचित जानिये सो कीजिये आप धर्मज्ञ हैं मैं अज्ञहूं॥

व्यापारी की इस प्रकार वार्ता श्रवण कर महाराज ने उसे अश्वासन प्रदान किया। और आज्ञा दी कि धैर्य्य धरो हम भलीभांति इसका निवेरा करते हैं और उन दुराचारी तस्करों को दंड देंगे। परंतु भला तुम यह किसी से कुछ कहना मत !!

इस के दूसरे दिन महाराज छत्रसाल जी ने जंगल में पहाड़ के ऊपर किसी पूजा के बहाने सब योगियों को छोटे बड़े से न्योत बुलाया और इधर रनवास में उनकी सब स्त्रियों को भी न्योता कर बुला भेजा। तब आप बीच स्त्रियो में बैठ कर पूछने लगे कि कौन किसकी स्त्री है कौन किसकी कौन है ? महाराज के मुख से इस प्रश्न के निकलते ही मारवड़ी व्यापारी की बहू गद्गद कंठ से बोली कि श्रीमान् यह कोई भी किसी की व्याहता स्त्री नहीं हैं यह सब सतीत्व धर्म से च्युत इन तस्करों की चुराई हुई अभागिनी परस्त्रियां हैं। यह अतीव आश्चर्य्य जनक वार्ता सुन कर महाराज ने उसे शांत होने का अनुरोध किया और क्रमशः एक २ स्त्री से प्रश्न करना आरंभ किये। तब उन सबोंने भी अपनी २ दुःख कहनी निवेदनकी तब महाराज ने तुरंत सेनापतिको बुलाकर आज्ञादी

कि जिसस्थान पर जोगी लोग एकत्र हैं १०० सिपाही जाकर इसी समय सब जोगियों का सर छेदन करें और तुम स्वयं वहां जाकर उनको वहीं गड़वादो कि फिर कोई एसा दुष्कर्म करने की चेष्टा वा अभीष्ट ही न करे। और आप ने यहां सब स्त्रियों को उनके यथारुचि किसी को उनके घर भेज दिया किसी को अन्न वस्त्र का प्रबन्ध कर दिया सो वे वहीं रही। उपरोक्त वणिक् बधू तो श्रीमान् को नमस्कार करके और अपने स्वसुर से आज्ञा लेकर उसी समय योगिनी भेष धारण करके वहीं से बन को चली गई॥

यह किंचित एक बिषय का बर्णन किया गया है। श्रीमान् की न्यायपरायणता के विषय में इस देश में आनेको उत्तम २ कथायें प्रचलित हैं। परंतु इस विषय का अबभी ठीक २ प्रमाण स्थित है इसीसे इसका उल्लेख किया गया है।

साधुसेवा।

(बाबा लालदास जी से साक्षात और छत्रपुर का वसाया जाना)।

संवत् १७६४ बसंतऋतु वैशाखसुदी ५ को महाराज छत्रसाल जी अपने दोनों राजकुमारों तथा अन्य दो चार सभासदों सहित अहेर को पधारे। कुछेक दूर चलने पर श्रीमान् को एक शूकर देख पड़ा तो आपने उसके पीछे घोड़ा डालदिया। वह शूकर ७ मील पर्य्यंत भागा। जहां महाराज ने उसे अपने बरछे से हतन किया। इस समय प्रहर दिन चढ़ा होगा। एक तो जेष्टमास दूसरे बराबर ७ मील घोड़े पर सावारी के परिश्रम से महाराज अत्यन्त पिपासाकुलित हो उठे। इस्ततः जलकी खोजमें परिभ्रमण करने लगे परंतु कहीं

भी जलका चिन्ह न देख पड़ा। जब वे साम्हने की एक पहाड़ी पर चढ़े तो कुछ धुवा दीखपड़ा इससे श्रीमान् ने अनुमान किया कि जब यहां धुवा हैं तो अग्निहोना अवश्य सम्भव है और क्या आश्चर्य्य है की कोई इस अग्निका कर्ता भी वहां हो। निदान वे उसी धूम्रकेतु की सीध में चल पड़े। चलते चलते जब वे उस धूम्रकेतु के निकट पहुंचे तो उन्होंने वहां पर देखा कि महाबीर जी की एक मूर्ति पलाश वृक्षके नीचे स्थापित थी। एक फूम का बङ्गला था और उसीमें धूनी चिमटा के चिन्ह से वहां किसी साधू का स्थान ज्ञात होता था। महाराज घोड़े से उतर कर महावीर जी को दंडवत कर बङ्गले के बाहर ही जा बैठे। उसी समय साधू महाशय भी कुछ जड़ीबूटी लिये आ उपस्थित हुए। राजा ने उठकर उन्हें अष्टांग प्रणाम की। साधू ने आसिर्बाद दिया और पूछा राजन्! क्या इच्छा है?। इस बचन को सुन कर महाराज मनही मन चकितहोकर कहने लगे। ऐं! मैं तो एक सिपाही के भेष में हूं इस साधू ने मुझे क्यों कर जान लिया। इसी तर्क वितर्क में थे कि साधू ने राजा को कुछ फल देकर कहा बच्चा प्रसाद बजरंग का पाओ, फिर जल पान करो। यही महाराजकी इच्छा भी थी। जलपान करने के पश्चात, जब राजा ने साधू से बिदा मागी तो साधू ने कहा कि राजन् तू बड़ा प्रतापी है। एक बात मेरी कही करे तो कहूं? राजाने विनय पूर्वक निवेदन किया कि यह सेवक किस योग्य है? जो आज्ञा हो प्राण कें सांटे भी इस दास को साधूओं की आज्ञा शिरोधार्य्य है। तब बाबा जी ने प्रसन्न होकर आज्ञा दी कि बच्चा यहां तुम अपने नाम का एक नगर बसाओ। कल्ह इसी समय शुभमहूर्त है। बेटा! यह ग्राम तेरा कीर्ति

स्वंभ होगा और प्रत्येक समय में बसंतऋतु का सा उपवन प्रफुल्लित रहेगा । निदान महाराज ने मउ में आकर अपने सभासद् मन्त्री तथा राजकुमारों को सब वार्ता कह सुनाई । दूसरे दिन बाबाजी की आज्ञानुसार-जहां अब राज्यमहल हैं शहर छत्रपुर की नीव, वैसाख सुदी ६ वि० संवत् १७६४ को, डाली गई । महाराज ने अपने हाथ से ईंट रक्खी और उसी समय शहर अग्कोंवा औ काटी के महाजनों को यहां रहने का अनुरोध किया गया । यही छत्रपुर प्रमर बंशावतंश श्रीमन् महाराज धिराज श्री १०८ महारज विश्वनाथ सिंह जूदेवकी राजधानी है ॥

हमारे पाठक गण इस पुस्तक में प्रमरबंशावतंश श्रीमान् वर्तमान् नरेश का नाम देख कर तथा बुन्देलों के बीच में एक प्रमरवंशीय राज्य की स्थिति देख इस बिषय में कुछ अधिक जानने के अभिलाषी होंगे इसी कारण आपकी यह अभिलाषा पूर्ण करने को मैं राज्य छत्रपुर का संक्षेप में वर्णन लिखता हूं ।

वि० चौदहवीं शताब्दि में तोमर क्षत्री ग्वालियर के राजा मानसिंह जी के भानजे पुन्यपाल प्रमार पवांयवाले के चारपुत्र हुए । प्रथम रतनसिंह, दुतीय संकरसिंह, त्रितीय जैतसिंह और चतुर्थ चंद्रभागा वेश्या से चंद्रहंस उत्पन्न हुए। पुन्यपाल जी के तृतीय पुत्र जैतसिंह कैरुवा में रहे । इनसे १९वीं पीढ़ी में कुंवर सोनेसाह नाम प्रतापी पुरुष हुवा । कालचक्र के फेरसे सोनेसाह को कैरुवा छोड़ कर पन्ना में आना पड़ा । यहां महाराज सरनेतसिंह परनानरेश के यहां सं १८४० में वह बिशेष वेतन पर वे सेनानायक नियत हुए । कालांतर में

आपको पन्नासे ४ लक्ष की आय की जागीर मिली। इन के ५ पुत्र हुए। तिनमें जेष्ट महाराज प्रतापसिंह जूदेव को वि० संबत् १८८३ में राज्याभिशेषक हुआ। आप के चार रानियां थी। जिससमय संबत १९११ में श्रीमान् महाराज प्रतापसिंह जी का परलोकबास हुआ तब इन के दत्तक पुत्र महाराज जगतराज का वय केवल ११ वर्षका था इस हेतु राज्य का प्रबंध महाराज प्रतापसिंह जूदेव की मझली रानी जरावकुंवरिजू ने किया और संबत् १९१४ में यहांपर २२ हजार सैन्य से भली भाति राज्य की रक्षा की। महाराज जगतराज जूदेव को राज्य तिलक संबत १९११ होमें होगया था परंतु आपने रज्य कार्य्य अपने हाथमें २० वर्षकी अवस्थामें लिया। यह महाराज बड़े चतुर और गुणज्ञथे। इनके रूप लावण्य की तो देखने वाले इस प्रकार प्रशंशा करते है कि आप अद्वतीय सुन्दर थे। संवत्१९१८ में दरबार आगरे में १५० राजा थे परंतु एक भी श्रीमान् छत्र पुराधिप महाराज जगतराज जी की समसर का सुन्दर न था। आपको परमात्माने एक शहनशील सब गुणनिधान पुत्र प्रदान किया जिसका जन्म भाद्रवदि ४ बुधवार सं १९२३ को हुआ। महाराज जगतराजजी के युवावस्थामें ही पर लोक वास होजानेपर इनके उपरोक्त पुत्र महाराजधिराज विश्वनाथ सिंह जूदेव छत्रपुर के राज्याधिकारी हुए। महाराज जगतराज का परलोक वास होने के समय इन का वय केवल १ वर्ष का था। पांच वर्ष की अवस्था होने पर श्रीमान् ने राजकुमार

---

* कांटी, बर कोहां दोनों गांव अब भी है छत्रपुर से २ कोशके फासले पर।

कालेज नौगांव में विद्याध्ययन आरंभ किया और भली भांति विद्या रत्न ग्रहण करलेने पर सं १९४४ में आपका इख़्यार हुआ। हां यह बात मैं भूल गया था कि श्रीमान् की बाल्य-वस्था में आपकी माता ने राज्यका प्रबन्ध किया और भली भांति रैयत वा नौकर सबको प्रसन्न रक्खा। आप बड़ी दयावान हैं। सं १९३४ में जब अकाल से पीड़ित भदावड़िये लोग भगे थे तो आपने शहर में सदर छत्रपुर आज्ञा दे रक्खी थी कि कोई भी भूखा न जाने पावे और उस समय हजारों मन अनाज रोज दान किया जाता था।

जिस समय संवत् १९४४ से श्रीमान् का इख़्यार हुवा सर्वत्र प्रजा सुखी जागीरदार मेंमार अतीव प्रसन्न हैं। आप अपने कुटम्ब के भाई बंधुओ का बहुत आदर करते हैं। विशेष कर के आप में शील तो मानों रोम २ में भरा है। एक गरीब से भी गरीब का शील नहीं तोड़ते। अपराध करने पर भी किसी की जीविका को हानि नहीं करते। सबका यथोचित सन्मान करते हैं। आप की बुद्धि बड़ी तीव्र है अधिक ध्यान देने योग्य यह बात है कि आप अंग्रेजी उर्दू इत्यादि सब भाषाओं में निपुण हैं और अंग्रेजों से बहुत मेल मिलाप रखते हैं परंतु तब भी आप अपने सनातन धर्म में इतने दृढ़ हैं कि केवल रीवां नरेश ही ऐसे सुनने में आते है। अन्यत्र तो राज कुमार अंग्रेजी पढ़ते ही शराब का बोतल उठाते और आनन्द से छुरी से साहबों के साथ खाते नहीं लजाते हैं। आप अंग्रेजी, उर्दू, नागरी, संस्कृत, इत्यादि भाषाओ में दक्ष हैं। कानून फिलासफी ज्योतिष, आदि प्राचीन इतिहास अथवा तंत्र मंत्र शास्त्रों को भली भांति जानते और उस में

श्रद्धा भी रखते हैं। ऐसे ही आप के मंत्री फज़लहक पंजाब निवासी बड़े चतुर, और विद्वान पुरुष हैं।

उपरोक्त साधू का नाम बाबा लालदास जी था। अब भी इन का स्थान लालकड़क्का का अखाड़ा कहा जाता है। इन बाबा जी के आज्ञानुसार बसाया हुआ छत्रपुर वास्तव में निरंतर गुलजार रहा। सं० १८४० में यहां के महाजनों ने अर्जुनसिंह प्रमार को ३००००० रुपया सात घंटे में जमवा कर दिया था। सं० १९१४ में यहां बाइस हजार फौज थी सो लिख ही चुके हैं। इस समय अब पढ़ने लिखने की धूम चतुर्दिक है सो भी यहां विद्या की उन्नति अच्छी है। मैं यहां तक कह सकता हूं कि यहां का स्कूल बुन्देलखंड भर में सब स्कूलों से उत्तम है। लाला भगवानदीन सेकिन्डमास्टर महाराज हाई स्कूल छत्रपुरने काव्यलता नामक कवि समाज भी स्थापित की है। आप वास्तव में बड़े विद्वान और चतुर हैं। आप में समझने की शक्ति बहुत अच्छी है। अधिक क्या आपही (लाला- भगवानदीन) के समझाने और पढ़ाने का नमूना है कि आप यह पुस्तक पढ़रहे हैं।

शारीरिक शक्ति

राज्य छत्रपुर स्थान मउ के निकट के मकबरा में अभी जामा जो कि अब बहुत ही जीर्ण हो गया है रक्खा हैं। उसके देखने से आपके डील डौल का अनुमान भलीभांति हो सकता है। उसी के अनुसार मैं यहां उल्लेख करता हूं। उचाई अनुमान ६॥ फुट, वक्षस्थलकी चौड़ाई ६८ इंच, परंतु कटि सूक्ष्म शरीर की बनावट सुडौल, मोढ़े बड़े और बाहु लंबे ज्ञात होते हैं। आप

पुदारिए अर्थात् बड़े पेट के नहीं थे। उसी समय के लिखे हुए चित्रों से चेहरे की बनावट ऐसी ज्ञात होती है। चेहरा सुडोल भरा हुआ न बहुत लम्बा न गोल, नासिका सुढ़ार, कपोल भरे, माथा चौड़ा भूंछबड़ी और लम्बे नेत्र बड़े और गोल परंतु कुछतिरछे। औष्ट धन्वा कार डाड़ी की ठोड़ी नुकीली सुढार, तथा आपकी आप दाढ़ी के बजाय केवल, गलमुच्छे रखते थे जन्म कुंडली चक्र से शरीर की रंगति सांवरी ज्ञाति होती है इसके अतरिक्त पंडितं ज्योतषी महानुभाव अन्य लक्षण स्वयं विचार सकते है। महाराज छत्रसाल जी जिस प्रकार वीरथे वैसेही रसिक और शरीर से विषय संभोग में पुष्ट थे। श्रीमान् के १७ रानिया स्ववर्ग प्रमर धंधेरे आदि कुलकी थीं दो रानिया छत्तीस कुरी में से थी और इनके अतरिक्त और भी अन्य ज्ञातिय। स्त्रियां महल में थी जिन से महाराज के ६८ पुत्र हुए—

१ जेष्ठ पुत्र पड़हरिन रानी से पदम सिंह नाम हुवा २ हिरदे सिंह ३ जगतराज मझली रानी दान कुंवरि के पुत्र हैं ४ भारती चंद मझली रानी के पुत्र हैं और पंचम हमीरन् ६ माधोसिंह ७ देवीसिंह ८ खानजू ९ भगवंतराय १० मरजाद-सिंह ११ तेजसिंह १२ शंभुसिंह १३ दूरजनसिंह १४ गोविन्द-सिंह १५ केशवराय १६ धीरजमल्ल १७ सालमसिंह १८ अर्जुन-सिंह १९ करनजू २० कुंवर चतुरभुज २२ नौनेदिवान २३ अनूप-सिंह २४ दलपतराव २५ सिवसिंह २६ मानसिंह २७ राजाराय २८ अनुरुधासिंह २९ किसुन सिंह ३० खांनजहान ३१ नवलसिंह ३२ अनंतसिंह ३३ केसरीसिंह ३४ उदेतसिंह ३५ हिम्मतसिंह ३६ मानसिंह ३७ पूरनमल ३८ दरयावसिंह ३९ गंधर्बसिंह

४० स्यामसिंह ४१ बरजोरसिंह ४२ खूबसिंह ४३ उरगसिंह ४४ विशंभसिंह ४५ पहिलवांनसिंह ४६ बलवंतसिंह ४७ हनमतसिंह ४८ मकुन्दसिंह ४९ समसेरबहादुर ५० रानासिंह ५१ उमरावसिंह ५२ कमोदसिंह ५३ दिनदूला ५४ गांजीसिंह ५५ मोहनसिंह ५६ भीमसिंह ५७ दलसिंह ५८ देवीसिंह ५९ सावंतसिंह ६० अंगदजू ६१ रायचंद ६२ जुरावनसिंह ६३ फूल सिंह ६४ अचलसिंह ६५ खेतसिंह ६६ पर्वतसिंह । ६७ सहायसिंह ६८ मिर्जाराजा इत्यादि अन्य रानियें के पुत्र हैं ।

महाराज छत्रमाल जी के उपरोक्त सूची लिखित १९ स्वज्ञातीय रानिया व मुस्तरी वेश्या सहित ६ और स्त्री थीं तिनके उपरोक्त ६८ पुत्रें का विवरण इस प्रकार है कि स्वज्ञातीय रानियें से ५२ विजातीय स्त्रियें से १४ और मुसलमानी स्त्री से १ वेश्या से १ । इन ५२ पुत्रें में से हृदयसाह जगतराज पद्मसिंह और भारतीचन्द की सन्तान अद्यावधि शाशन करता है वर्णन संक्षेप में पीछे से लिखा जावेगा ।

(राज्यप्रबन्ध)

महाराज छत्रसाल जी के राज्य प्रबन्ध के विषय का कुछ प्रमाण नहीं मिला कि किस क्रम से शाशन होता था परन्तु यह टीक मालूम है कि आप स्वयं राज्य कार्य्य अपने हाथ से करते थे । रात्रि में भेष बदल कर स्वयं प्रजा की देख भाल करते थे और दुराचारी कर्मचारियें कृत उन के दुःख सुख की कहानियां सुनते और दुष्ट को दण्ड वा स्वधर्म कार्य्यकर्ता को भली भांति पुरष्कार देते थे । दण्ड योग्य

कर्म करनेवाले अपने पुत्र को भी महाराज दण्ड दिया करते थे और धर्मरत शत्रु को भी पुरस्कार देते थे। सैन्य करके किलों को रक्षित रखते, भलीभांति धन की रक्षा करते, और समय पाय धर्मकार्य्य में कुवेर का सामना करनेवाले अपने कोष में अधर्म की कौड़ी भी न आने देते थे। महाराज का यह पूर्ण सिद्धान्त था कि अधर्म करके अर्जित धन इन्द्र की भी श्री को नाश करता है। और हां! इतना और भी मालूम है कि महाराज के दरबार में पार्लीमेन्ट की नाईं एक सभा थी। जिस में प्रत्येक जाति के दो दो प्रतिष्ठित पुरुष सभासद थे और इसी प्रकार तहसीलों में प्रत्येक जाति की पृथक २ सभायें थीं। इन्हीं सभाओं के द्वारा निर्णय होकर राज्य शासन होता था और वह बात अब तक चली जाती है कि मउ के महतों अब भी सब जगह मुखिया माने जाते हैं।

प्रजापालन

संवत् १७४८ के लगभग महाराज छत्रसाल जी के राज्य पर घोर अकाल ने आक्रमण किया। तब आप ने उपरोक्त (१५६ सफा में लिखित) भाटिन माता का जो दो करोड़ का धन रक्खा था उस में एक करोड़ रुपया और मिलाकर मउ के गिर्द पहाड़ पर जो कोट है उसका काम लगवाया और वह इस प्रकार से कि, मर्द को ।=) आने, स्त्री को ।) चार आने, बारह वर्ष तक के लड़के को =) दो आने। काम करनेवाली स्त्री गर्भ के बच्चे को -) एक आना, तीन वर्ष तक की आयु वाले बालक को)॥ आध आना, और पलना में पड़े हुए बच्चे को)॥। पौन आना दैनिक दिया जाता था।

आप ने निर्धन ब्राह्मण मात्र को सर्वत्र माफी भूमि

दे रक्खी थी कि जो अब तक उन (ब्राह्मणों) की संतानवाले खाते पीते जाते हैं, और अन्य जातियों के निमित्त समस्त राज्य में आप की यह आज्ञा थी कि कोई भी काहिल होकर भिक्षा मांगने का साहस न करे। किसी प्रजा के मनुष्य को निर्धन हो जाने पर चाहिये कि वह तुरन्त सरकार में दरख्वास्त करे कि गांव के मुखिया जमीदार तथा अन्य भद्र पुरुषों की सम्मति अनुसार उसे सरकार से रुपया पैसा बैल गाय इत्यादि दिया जायगा अथवा राज्यसेवा करना चाहे तो अपनी योग्यतानुसार विशेष वेतन पर नौकरी कर सकता था। हे वर्तमान राजा महाराजाओं आप भी यदि प्रजा की ऐसी ही सुधि लें तो क्यों भारत अनाथ और आरत कहावे।

श्रद्धा भक्ति

यह तो हम लिख ही चुके हैं कि महाराज का ईश्वर प्रति दृढ़ विश्वास था। अब यह बात भी कहना देना उचित ज्ञात होती है कि वे ब्रह्मसमाजी तथा आर्य्य समाजी नहीं थे। यह महाराज सगुण स्वरूप के सच्चे उपासक थे। जब यह अपने काका जी सुजानराय के निकट थे तब भी मन्दिर में जाकर नित्यनेम से दर्शन किया करते थे और जब यह दल बद्दल जोड़ कर सर्वत्र फिरते थे तब भी श्री मूर्तियों को नित्य अपने साथ ही में रक्खा किये हैं। बिना भगवान को भोग लगाए आप कभी भोजन नहीं किया करते थे। वही मूर्ति राज्य सिंहासन ग्रहण करने पर अपने महेवा में छोटी सी पहाड़ी पर मन्दिर बनवा कर वहां पधराई। महाराज

के इन ठाकुर जी को नृत्य गोपाल कहते हैं। ऐसा प्रख्यात है कि महाराज छत्रसाल प्रेम से प्रफुल्लित होकर श्री ठाकुर जी के सन्मुख नृत्य किया करते थे। एक दिवस ठाकुर नृत्य गोपाल जी ने स्वयं महाराज छत्रसाल जी का हाथ पकड़ लिया और आप भी नाच उठे। इस प्रकार नित्य इन ठाकुर जी की ओर महाराज छत्रसाल का नृत्य हुआ करता था। अब यह नृत्य गोपाल जी महेवा में पधारे हुए हैं। कालगति देख कर शोक के साथ अब मुझे यह भी कहना पड़ा कि अब वह छत्रसाल हैं, और न वह नृत्य गोपाल हैं।

विप्रसेवा

महाराज छत्रसाल जी ब्राह्मण को अधिक मानते थे। आप ने अपने राज्य में यह नियम रक्खा था कि जो जमीन और लोगों को १।) स्वा रुपया सालाना बीघे पर दी जाती थी वही जमीन ब्राह्मणों को ॥=) या ॥।) बीघे पर दी जाती थी। इस विषय में महाराज का ऐसा विचार था कि अन्य लोग तो अहिर्निस खेत पर ही रह कर काम करते हैं परन्तु ब्राह्मणों को दोपहर के समय घर पर आना होता है और प्रातः सायंकाल के समय सन्ध्या बन्दन इत्यादि में वे जो समय लगाते है उस में उनका नुकसान होता है। सो इस रीति से पूरा हो जावेगा परन्तु वे अपने नित्य नियम में त्रुटि न करें। निदान यह दस्तूर अब भी जारी है कि ब्राह्मणों को ज़मीन का लगान ॥=) या बारह आना ॥।) बीघा लगता है। और ऐसा तो कोई भी गांव अब भी बाकी नहीं है जहां ब्राह्मण माफी जमीन न पाते हों। सब के पास अब भी महाराज

छत्रसाल जी की दी हुई सनदें पाई जाती हैं। अंतिम समय में जब महाराज ने अपने दोनों पुत्रों को नीति शिक्षा दी तब यह भी आज्ञा दी कि ब्राह्मण पर सदा दया करना और उन के क्रोध को आप सहना पर उन पर क्रोध कभी न करना। इस पर किसी ने कुछ उत्तर न दिया। तब महाराज ने उनसे पूछा क्यों क्या समझे नहीं? तो जगतराज जी ने कहा महाराज समझा। पर क्या यदि ब्राह्मण अपराध करें तब भी कुछ न करें। इस पर महाराज ने हंसकर उत्तर दिया "तो क्या बिना अपराध किये भी तुम प्रजा को सताना चाहते हो" सुनो हे पुत्र--बिना अपराध किए किसी को सताना तो राक्षसी कर्म है। और सांति प्रति सांति रहना यह मनुष्य का धर्म है। परन्तु अपराध किए पर भी क्षमा करना उसी का नाम क्षमा है। जैसे रामचन्द्रजी ने परसराम जी से कहा है। "सब प्रकार हम तुम सन हारे, मारत हूं पां परिय तुम्हारे"।

नियम पालन

महाराज छत्रसाल जी का यह नियम था कि प्रातःकाल शयन से उठ कर जब एक, कवित्त, दोहा, या पद ईश्वर की स्तुति में बना लेते तब कुछ अन्य कार्य्य करते थे और यह नियम महाराज का आजन्म निभा भी। उस काव्य में से कुछ स्फुट काव्य एक दो सौ कवित्त तो संग्रह हो चुके हैं बाकी की तलाश है। ईश्वर ने चाहा तो वह भी प्रेमी पाठक महानुभावों के सन्मुख प्रस्तुत करूंगा।

मृत्यु

हाय! काल भी कैसी वस्तु है !! एक दिन सब को इस के फेर में पड़ना पड़ता है। श्रीरामचन्द्र वा कृष्णचन्द्र जी ने भी समय आने पर क्षणमात्र विलम्ब न करके इस असार संसार से यात्रा की। एक दिन वह था कि बीर छत्रसाल एक अनाथ बालक थे। फिर वे एक युवा पुरुष बीर बलवान शत्रुदल ध्वंस करनेवाले हुए। फिर महाराज की पदवी ग्रहण कीं। हाय! अब आज उन के भी इतिश्री का दिन आया। बीर छत्रसाल जी का मृत्यु संवाद लिखते समय मुझे इस बात का पूर्ण ध्यान आता है कि प्यारे भाइयों संसार में किसी को रहना नहीं है केवल निज कृत यश अपयश की कहानी मात्र शेष रह जावेगी। तुम्हारा हमारा यह अभिमानी स्वरूप क्षण मात्र में भस्म हो जावेगा। यद्यपि कोई धन वैभव के डर से तुम्हारे अधर्म को भी चाहे धर्म, ख्याल अपयश को यश और कुकार्य्य को सुकार्य्य कहे परन्तु ध्यान रक्खो एक दिन सब के निमित्त वह समय आता है कि सब की असली कलई खुल जाती है। कुकर्मी के कुकार्यों पर सर्व-साधारण थूकते हैं और राम २ कहते हुए उस शब्द का प्रयोग करके उस का नाम लेने से भी घृणा करते हैं। और सत्पुरुषों को अवतार मान कर शत्रु भी उन की प्रशंसा करते हैं। वही जीवन संसार में सफल भी है। कारण कि प्रत्येक जीव के शरीर में ईश्वर आत्मा स्वरूप से वास करता है और जिसे सर्वसाधारण घृणा करे उसे ईश्वर घृणा करता है जिस से सब को मार्मिक कष्ट पहुंचे उस के दुराचरण से ईश्वर भी दुःखी

होता है और सर्वसाधारण के सुख से वह सुखी होता है। यह दोहा बहुत ठीक है कि "यही लोक परलोक है याते सुधरें दोय" वास्तविक धर्म शब्द का अर्थ भी यही है। आत्मनाः प्रतिकूलानि परेषांन समाचरेत् (इति धर्मः)। प्यारे भाइयों तुम ऊपरी टीका मटीका से चाहे सब को भुलाओ परन्तु ईश्वर सर्वज्ञ है।

यही देखिये न! श्रीमहाराज छत्रसाल जी के सत्कर्मों ने ही मेरे हृदय को इस पुस्तक लिखने की ओर खींचा है कि अन्य बंधुवर्ग आपकी जीवनी को पढ़ कर सत्पुरुषत्व का नमूना देखे और ऐसे महात्मा पुरुष के चरितों अनुयायी हों। जीवन चरित्र लिखने का आशय भी यही है। देखिये श्रीरामजी के पावन चरित्र की कथा की रामायणें अनेकानेक रूप में आपने देखी होंगी, पर क्या अपने कहीं रावणायन भी देखी है?। वृजविलास, कृष्णचन्द्रिका भागवत इत्यादि भी पढ़ी होगीं पर क्या कहीं कंसविलास, भी देखा? प्यारे पाठको अधिक क्या कहूं आप इतने ही में मेरा अभिप्राय समझ सकते हैं। कारण कि अकलमन्द को इशारा काफी होता है। और जो ऐसी बात है कि "मूरख सों दुःख रोओ, रोटा में घी खोओ" तो फिर बात ही क्या है इच्छा हो सो कीजे मुझे जो इच्छा हो दो उलटी सीधी कहलीजिये सा मैं इस की परवाह नहीं करता।

मृत्यु देवी आप को नमस्कार है। धन्य है परमेश्वर की सच्ची आज्ञा करनी, अपने समय की ठीक पाबन्द, परमात्मा का नाम जगत में जाहिर करनेवाली ईश्वर का दण्ड स्वरूप, काल की भी काल, प्रकृति को भी ठीक समय पर उचित

कर्म करानेवाली। संसार के विचित्रता का मूल, सत्यासत्य का निर्णय कारिणी, निरालम्ब सन्यस्तों को इष्ट स्वरूप, पापी पाखण्डियों को बिकराल भयानक काल स्वरूप, मृत्यु देवि आप को बारम्बार नमस्कार है!!! वास्तव में हे देवि यदि आप न होती तो संसार संसार ही न होता। तैमूरलङ्ग की नाईं दुष्ट संसार को अमानुष ही कर देते । दुष्ट शाशनकर्ता प्रजा की न जाने क्या दशा करते यश और सत्कर्म का कोई नाम ही क्यों लेता यह सब विलक्षणता तेरी ही है। परन्तु इस पर भी तेरी महिमा को तथा धर्माधर्म के निर्णय को जान कर भी जो लोग उचित कार्य्य नहीं करते, राजा प्रजा का पालन नहीं करते, पण्डित लम्पटता और विषय वासनाओं में लिप्त रहते हैं, हे देवि ! ऐसे नरपशुओं को क्या पदवी दी जावे ।

ऐं! मैं क्या बकगया! प्यारे पाठको क्षमा करो! वास्तव में मैंने बड़ी भूल की कि आप का कुछ अमूल्य समय अपनी गपशप में लगाडाला; परंतु यदि आप इसे श्रवण कर प्रसन्न हुए तो मैं अपनी बकको कृत कार्य्यमानूंगा ।

सत्यासत्य का निर्णय भगवान जाने परन्तु महाराज छत्रसाल जी की मृत्यु के विषय में जैसी कुछ कथा इस देश में प्रचलित है और प्रमाण भी पाये जाते हैं उसी का उल्लेख मैं यहां भी करता हूं और एक बात यह भी है कि ऐसे महात्मापुरुष के चरित्रों पर संदेह करना तथा मिथ्या अनुमान करना मेरी शक्ति के बाहर है । आप का विश्वास चाहे जैसा हो ।

कहते हैं कि महाराज छत्रसाल जी वैसाख सुदी

३ संवत १७८८ को ध्रुवसागर (धुवेला) में किस्ती पर चढ़े जलक्रीड़ा कर रहे थे कि एक ब्राह्मण ने ताल के पार पर से पुकारा "कि महाराज से कुछ प्रार्थना करना चाहता हूं"। आद्रहृदय महाराज ने आज्ञा दी कि मोती* बाग में आओ हम भी वहीं आते हैं निदान वह ब्राह्मण वहां जा पहुंचा और महाराज भी किञ्चित्कालोपरांत बाग में पहुंचे। जब ब्राह्मण को बुलाया गया और उस से पूछा "कहो विप्र क्या है" तब उसने निवेदन किया राजन् मेरा मन्त्र बहुत गूढ़ है आप के अतिरिक्त दूसरे को सुनने का अधिकार नहीं है—यह सुन कर महाराज बगीचे की एक प्रछन्न कुंज में ब्राह्मण सहित जा उपस्थित हुए और वहीं पर ब्राह्मणने इस प्रकार (निम्न लिखित) अपना व्याख्यान आरम्भ किया।

महाराज! मैं निकटवर्ती ग्राम नदगांव का रहनेवाला दरिद्री ब्राह्मण हूं दरिद्रता के कारण मैं; कुटुंब के मनुष्य भूखों मरते देख, उन के पोषणार्थ द्रव्य संचय करने के निमित्त दक्षिणा देश को लक्ष्मी से परिपूर्ण सुन उधर को यात्रा, की पर हाय दुखियों को मृत्यु के पश्चात भी सुख नहीं मिलता।

दोहा—कहूं जाव नाहीं मिटै जो विधि लिखी लिलार।
अंकुश भय करि कुंभ कुच भये तहां नख मार॥

हे श्रीमान् सो मेरा कर्म दण्ड वहां भी मुक्त न हुआ। मुझे वहां भी कुछ लाभ न हुई। वरन भूखों मरने लगा। तब मैं निपट निराश होकर नर्मदा किनारे जाय फल पत्र खाय अपना

---

* मोतीबाग के ठीक मध्य में गद्दीवाला मक़बरा है। यह मोतीबाग उस समय ताल से लेकर बादल महल तक १॥ मील के घेरे में था।

कलेजा ठण्ढा किया और विश्राम लेने के निमित्त किनारे की एक गुफा में जा बैठा । यद्यपि मैं अति दरिद्री था और दुःख से अष्ट पहर मृत्यु का स्मरण करता था पर गुफा में जाते ही वहां से दो मनुष्योंने आकर जब मेरे दोनों हाथ पकड़ लिये तब मेरे अश्चर्य्य और भय की सीमा न रही । निदान वह· लोग मुझे पकड़ कर एक बड़े लम्बे पूरे साधू के सन्मुख ले गये तब उस साधू ने मुझ से ये प्रश्न किये। उसने कहा "कहां रहता है" ।

मैं-(हाथ जोड़ कर) महांराज बुन्देलखण्ड में एक नदगांव गांव है वहां का रहनेवाला दरिद्री ब्राह्मण हूं।

साधू-वहां पर ही छत्रसाल शाशन करता है ।

मैं-(अश्चर्य से) हां महाराज! ।

साधू-अच्छा उस से जाकर कह देना कि जा तुझे तेरे गुरूने बुलाया है । तेरी धूनी ठंढी होती है ।

मैं-महाराज! मैं यहां आते तो आ गया परन्तु अब जाने का मेरा भरोसा नहीं। आज तीसरी लंघन नर्मदा किनारे के फल पत्र खाकर मैंने क्षुधा शांति की है। मुझे यह भी नहीं मालूम है कि मेरा घर किधर है, फिर घर पहुंचना किस तरह सम्भव है ।

यह सुनकर बाबा जी ने कुछ इशारा किया जिस से कि तुरन्त उन दोनों मुझे पकड़ ले जाने वाले पुरुषों ने मेरी आखों पर पट्टी बांध दी और साम्हने रक्खी हुई चटांन पर बैठा दिया। बस फिर मुझे इतनी सुध है कि बाबा जी ने मुझ से यह कहा है "कि जाते ही मेरा संदेसा राजा से कह देना" बस फिर मैं वेसुध हो गया और जब मुझे सुधि आई तो

मैंने अपने को अपने घर के दरवाजे पर पाया। मेरी स्त्री ने मेरी आंख की पट्टी खोली। बस मैं वहां से सीधा आप के पास आया हूं। जिस शिला पर मैं आया हूं वह अब भी मेरे द्वार पर पड़ी है।

ब्राह्मण देवता की यह वाणी सुनकर महाराज ने उसे नन्दगांव की सनद कर दी कि अब भी उस के पुत्र पौत्र कुछ जमीन पाते जाते हैं और आप फिर भी अपने नैमित्तिक कार्य्य में लग गये।

उपरोक्त तिथि के पन्द्रह दिवस पश्चात महाराज पूजन ध्यानादि नित्तिक कार्य्यों से निश्चित हो कर मोतीबाग में संगमरमर की बनी हुई चौकी पर जा विराजे और अपने दरबारियों सहित दोनों पुत्रों को इस प्रकार नीति शिक्षा देने लगे।

छत्रसालउवाच।

वैताल छन्द।

कर्म जो जस करत है सो जात है तिहिं साथ।
अन्त में धन धाम माया रहत नहिं कछु हाथ॥
धर्म कर्म विचार तासों कीजिये हे तात।
सुयश लहिये जगत में अरु अन्त सुख अवदात॥ १॥
दृष्ट सों पथ शोध पग धर ऊंच नीच विचार।
वस्त्र सों जल शुद्ध करके पीजिये सुख धार॥
शास्त्र शुद्ध सो वाक्य बोलिय विषय वृति निरधार।
शुद्ध मन सों कर्म करिये धर्म निज अनुसार॥ २॥

दोहा ।

सब नीतन की नीति यह राज रङ्क जो कोय ।
समय देखकर अनुसरै अन्त सुखी वह होय ॥ ३ ॥

वैताल ।

सिंह कर गुण एक लीजिये वकुल कर गुण एक ।
चार कुक्कुट सों लहिय गुण पांच काक विवेक ।
षट प्रकृति सीखिय स्वान की औ तीन खर की नीति ।
सो सुखी है जगत में सब करत वासों प्रीति ॥ ४ ॥
होय कारज दीर्घ वा लघु होंय पै कर्त्तव्य ।
यत्न सों तेहि साधिये यह सिंह कृत भवतव्य ॥
ससंयम युत इन्द्रियन सों देशकाल विचार ।
नीति सों निज कार्य्य साधै वकुल गति अनुहार ॥५॥

दोहा ।

उचित समय पर जागनों, रण में रहे उदण्ड ।
भाइन देवो भाग उन, शत्रुन देवो दण्ड ॥ ६ ॥

वैताल ।

आप करके आक्रमण यों कीजिये सुख भोग ।
चार कुक्कुट की प्रकृति नर सीख लेहिं सुयोग ॥
गुप्त मैथुन कीजिये अरु धैर्य्य धरिये नित्त ।
समय लहि ग्रह करिय संग्रह परिश्रम सों मित्त ॥ ७ ॥
करिय नहिं विश्वास काहू कौ कबों क्षण एक ।
पांच प्रकृतीं काक की बुध अनुसरहि सुविवेक ॥
शक्ति यद्यपि बहुत भोजन करन हू की होय ।
थोड़ हू सों हो रहै सन्तुष्ट पै नर जोय ॥
गाढ़ निद्रा रहत आलस त्याग उठिये भीर ।

हिये धरिये स्वामि भक्तरु शूरता सिरमौर॥

दोहा।

यह षट गुण हैं स्वान में बरने कवि नीतज्ञ।
लहहि सुयश सुख जगत में सीख इनहिं नर प्रज्ञ॥९॥

वैताल।

थकेहू पर भार ढोवत जात गर्धभ जेम।
श्रमित होकर परिश्रम नहिं त्यागिये नर तेम॥
शीत उष्ण अरु वृष्टि पर जनि ध्यान कबहूं देय।
सदा ह्वै सन्तुष्ट विचरै त्रगुण खर सों लेय॥१०॥
नीति को यह मूल है मैं कह्यो तुम ते तात।
बीसहू गुण ध्यान देवे योग्य हैं अवदात॥
होय विजई जगत में सब कार्य्य वाके श्रेय।
बीसहू उपरोक्त गुण जो पुरुष चित धर लेय॥११॥

दोहा।

औरहु कछु अब कहत हौं सो सुन लीजे सर्व।
नीति विषय अति गूढ़ है याहि न जानो खर्ब॥

वैताल।

बली बैरी होय तिहिं अनुकूल कर व्यवहार।
आपने वश कीजिये नहिं करिय तासों रार॥
होय निर्बल आप सों प्रतिकूलता सों ताह।
कीजिये वश आपने सुख लीजिये नरनाह॥१३॥
शत्रु होय सामान्य तो निज घात बात विचार।
बल विनय छल भेद ताके संग कर व्यवहार॥
द्रव्य अर्जित कीजिये सत्कार्य्य में व्यय नित्त।
पाइये परलोक में सुख पालिये सन्मित्त॥१५॥

दोहा ।

धर्म रहित अति कष्ट सों हूँ अरि के आधीन ।
संपति तजिय कुवेर की रहिय सहित कोपीन ॥ १५ ॥

नरेन्द्र ।

विष्णु सदृश गुण रहित पुरुष एकाकी सुख नहिं पावे ।
जिम अमोल माणिक बिन सुवरण विरथा जन्म गवांवे ॥
उपकारी संग प्रति उपकार करत निज धर्म विचारी ।
त्योंही अपकारी को हनिये शास्त्र वाक्य अनुसारी १५

दोहा ।

धन दारा सुख स्वाद के सबै रहे आधीन ।
लिम त्रिप्त काहू नहीं पै जीवन भर कीन ॥ ३६ ॥

इस प्रकार नीति समुझाय महाराज ने अन्त में यह श्लोक कहा ।

श्लोक । एक वृक्ष समारुढ़ा नानावर्ण विहंगनाः ।
प्रभाते दश दिशु यांति (इदम्) का परिवेदना ॥

यों कह सब सभासदों को आज्ञा दी कि तुम यहीं रहो मेरे पीछे कोई न आना और अपना जामा और वालाबन्द उसी संगमरमर की चौकी पर रख दिया। केवल धोती पहिने हुए दक्षिण की ओर चले गये और बस फिर अब तक वापिस नहीं आये । जिस चौकी पर महाराज जामा रख गये थे उसी स्थान पर गद्दी लगी है और वही जमा जिस का वर्णन शारीरिकशक्ति के विषय में हो चुका अब तक क्खार है । यही तिथि महाराज के परलोक वास की मानी जाती है। परिनामी मत वाले महाराज को

तमसीं सखी का अवतार मानते हैं सो उन के यहा इस तिथि को उपवास का उत्सव होता है।

दोहा।

संवत शशि ऋषि नाग वसु तीज जया बुध स्याम।
नता नेह तज जगत सों छता गयो सुरधाम ॥ १ ॥

अर्थात् जेष्ट सुदी ३ बुधवार संवत १७८८ को महाराज छत्रसाल "बुन्देखण्ड केशरी" अपने सत्कर्मों का चरचा संसार में छोड़ आप परलोक को पधारे।

संवत् १७४५ तक बलदिवान कि जिन की संतान में इमलया या बमारी के जगीरदार रयासत छतरपुर में है, सेना ध्यत्त रहे, हृदयसाह और जगतराज जी के युवावस्था प्राप्त होने पर हृदयसाह को युवराज पद तथा राज्यमंत्रियत्व का अधिकार मिला और जगतराज सेनानायक हुए।

संवत् १६८५ में जब वाजीराव को छत्रसाल जी ने सहायतार्थ पूना से बुलाया और बंगस पर विजय प्राप्त की तब उसी समय यहाराज छत्रसाल जी ने अपने राज्य को तीन हिस्सो में विभक्त किया था। यथा महाराज की कुल आय उस समय ११२३८१५५) थी तिममें से ३९५७२०३) वाजीराव पेशवा को जिस में सागर झांसी वगैरह हैं, २६७६९०) हृदय-साह को ३६०४७६२) राजा जगतराज जी को, परन्तु जगतराज ने कहा हमको मउ में भी हिस्सा चाहिए तब महेवा जो अब राज्य चरखारी में है और उस समय मउ का एक महल्ला था जगतराज को दिया गया।

पन्ना ।

हृदयसाह।

महाराज छत्रसाल जी का परलोक वास हो जाने पर राजा हृदयसाह मउ के राजा हुए और जगतराज जैतपुर के जिन का जिकर पीछे होगा। महाराज हृदयसाह ने अनुमान संवत् १७९० में छोंटा मकबरा जहां अब महाराज छत्रसाल जी की सेज है, उसी उपरोक्त संगमरमर की चौकी पर बनवाया। पूरनदास धामी को पुजारी नियत किया और सिंगरावन गांव भोग के लिये लगाया जो अब भी बहाल है। परन्तु अब यह सिगरांवन राज्य छत्रपुर में है निदान केवल ९ वर्ष राज्य करने के पश्चात् संवत १७९० में राजा हृदयसाह भी बैकुण्ठ वासी हुए। इन के ९ पुत्र थे तिन में बड़े सभासिंह राज्याधिकारी हुए और इन से छोटे पृथ्वीसिंह बाजीराव के पास पूना को चले गए। वहां से इन ने ९००००० की जागीर पाई और साहगढ़ की बैठक मिली इन पृथ्वीसिंह से साहगढ़ का राज्य स्थापित हुआ जो सं० १९१४ में सरकार अंग्रेज के विरुद्ध शस्त्र धारण करने के कारण राजा बखतबली के कैद में हो जाने से अब गवर्नमेंगट राज्य में हैं। हृदयसाह के तृतिय पुत्र दासी पुत्र से लुगासी की जागीर कायम हुई चौथे अमरसिंह को संतान के खासगत में चामुण्डराय की पदवी से भूषित हैं। सभासिंह के तीन पुत्र अमानसिंह, हिन्दूपत व खेतसिंह नाम से थे, सभासिंह अमानसिंह के गुणों पर अत्यन्त प्रसन्न थे और प्रजा भी इनसे संतुष्ट थी इस कारण मझले होने पर भी इन्हें राज्य का अधिकार मिला। अमानसिंह बड़े ही

दानी हो गए हैं। विचित्र बात इन में यह थी कि इन के मुख से नाहीं शब्द आजन्म नहीं निकला। इन के प्रशंशा में पराग कवि ने यह कवित्त कहा है।

कवित्त।

रजत पहार घनसार मालती के हार छीर पारावार गंगधार सौ धराधर सौ। सत्य सौ सतोगुण सौ शारदा सौ शङ्कर सौ शङ्ख शुक्र सुकृत को सुधा सौ सुरतरु सौ॥ भनत पराग कामधेनु सौ कमोदनी सौ कंज कुन्द फूल सौ पुनीति पुण्य फर सौ। कलि में अमानसिंह करण अवतार जानों जाको जस छाजत छबीलौ छपाकर सौ॥

परन्तु संवत १८१३ में हिन्दूपत ने राज्य लोभ से तथा डाह से अमानसिंह को गोली से मरवाडाला और आप गद्दी पर बैठे हिन्दूपत ने अपनी राजधानी "पन्ना" बनाया। यह इमारतों के बड़े शौकीन थे। राजगढ़ के तथा छत्रपुर के राज्य महल इनके ही बनवाये हैं। और मउ के महल जिनका जीर्णोद्धार वर्तमान छत्रपुराधिपने कराया है हिन्दूपत के बनवाये हैं। छत्रसाल जी के समय में यहां केवल एक हवेली नुमा स्थान था। राजा हिन्दूपत के तीन पुत्र हुए। सरनेतसिंह, अनरुधसिंह धोकलसिंह। हिन्दूपत के बाद यद्यपि गद्दी का हक्क सरनेतसिंह का था परन्तु किसी कारण से अनरुधसिंह राज गद्दी पर बैठे; परन्तु इनकी अवस्था उस समय केवल १० वर्ष की थी इस कारण राज्यकार्य्य का प्रबन्ध वेनीं हजूरी के हाथ था। संवत १८३४ में हिन्दूपत का परलोक वास हुआ। जब अनरुधसिंह गद्दी नसीन हुए तो राज्य में दो पार्टी हो गईं एक का अधिपति वेनी

हजूरी था दूसरे का खेमराज चौबे। निदान जब खेमराज का चारा कुछ न चला तो उसने सरनेतसिंह को अपनी ओर खींचा और भड़का कर उन्हें जैतपुर ले गया। वरहां गुमान खुमानसिंह से उन के सेनापति अर्जुनसिंह पवांर को ५०००० सेना सहित सहायक लेकर पन्ना पर चढ़ आया और छत्रपुर से ३ मील पूरब गठेवरा के मैदान में संवत १८४० अषाढ़ सुदी परिवा को दोप्रहर घोर संग्राम हुआ। यहां बेनी हजूरी मारा गया और अर्जुनसिंह के हाथ खेत रहा। सरनेतसिंह के पश्चात इनके पुत्र किशोरसिंह गद्दी पर बैठे। इन्हें जानवर पालने का अधिक शौक था कहते हैं कि सन् १८४९ वि० संवत १९०५ में जब लार्ड डलहाउसी इन से मिलने आये तो यह दो शेर अपने साथ लेकर मिलने को गये थे। इस अमानुषी लीला से डर कर लार्ड डलहाउसी फिर इन से न मिले। किशोरसिंह ने इन्द्रदवन तालाव बनवाया और चित्रकूट में नवलकिशोर जी की स्थापना की। इन के पश्चात् हरेई सिंह या हरवंशराय गद्दी पर बैठे। और इन के पश्चात् इन के भाई नृपतसिंह राज्याधिकारी हुए। महाराज नृपतसिं के चार पुत्र, रुद्रप्रताप, लोकपालसिंह दिवान खुमानसिंह, और लक्ष्मणसिंह नाम से हुए। महाराज नृपति सिंह के बाद महाराज रुद्रप्रताप पन्ना के राज्यासिंहा--सन पर सुशोभित हुए। इनको सरकार गवर्नमेण्ट से महेन्द्र की पद प्रदान की गई थी। महाराज रुद्रप्रताप अति उत्तम शाशनकर्ता और प्रतापशाली महाराज हो गए हैं। इनके पश्चात् इनके लघु भ्राता लोकपालसिंह जी गद्दी पर विराजे। इन्होंने केवल चार वर्ष राज्य किया और इनके पश्चात् इनके

पुत्र माधवसिंह जो कुमार अवस्था में लल्लूराजा कहलाते थे पन्ना के महाराजा हुए। आरम्भ में इन्होंने बड़ी उत्तम रीति से राज्य कार्य्य करना आरम्भ किया, परन्तु यह बात बहुत दिन पर्य्यन्त न रह सकी। दुष्ट स्वार्थी पारुवर्तीलोगोंने। महाराज के मिजाज को बिगाड़ दिया और उसी समय वे एक हैदरी-जान नाम वेश्या के प्रेमपास में फस गये। इस कारण अपने सनातन गौरव को नष्ट किया। सत्य है, "कामातुराणां न भयं न लज्जा", इसी कुटिल वेश्या के अनुरोध से इन्होंने अपने पितृव्य दिवान खुमानसिंह को विष देकर मरवा डाला। परन्तु उनका यह पाप छिप न सका। न्यायशील दयालु वृटिश गवर्नमेण्ट ने माधवसिंह को राज्यच्युत करके १७०० मासिक वेतन लगा दिया है। अब वे बिलारी के किले में हैदरी (कवलकुंवर) सहित अपने शेष जीवन के दिन व्यतीत कर रहे हैं। हे राजा महाराजाओ ऐसे स्वार्थी लम्पट चापलूसों से बचो!

महाराजा माधवसिंह के पश्चात् गवर्नमेण्ट ने सुतराव राजा के पुत्र यादवेन्द्रसिंह को पन्ना गद्दी पर बैठाला। महाराज यादवेन्द्रसिंह की अवस्था इस समय केवल १५ वर्ष की है। इस कुमार अवस्था में भी श्रीमन् की बुद्धि तीक्ष्ण और लक्षण सब होनहार है। आप इस समय राजकुमार कालेज अजमेर में विद्याध्ययन कर रहे हैं। आशा है कि यह महाराज भविष्य में उत्तम रीति से प्रजा पालन कर सब को संतोष प्रदान करते हुए अपने पूर्व पुरुषाओं (छत्रसाल, अमानसिंह) के नाम को उज्वल करेंगे। ईश्वर करे जैसी बुद्धि धर्मरत आपकी अब है तैसही सर्वदा रहे। कोट,

पेन्ट, वासकोट, बूट, छुरी, कांटा, स्टिक, पेग से घृणा करते हुए अंग्रेजों का जाति स्नेह, देशभक्ति, दृढ़प्रतिज्ञता, प्रजा पालन, सौजन्य इत्यादि गुण श्रीमान् यादवेन्द्रसिंह जी ग्रहण करें तो बड़ी ही आनन्द की बात हो। ईश्वर एसा ही करे और इन्हें सर्वदा प्रसन्न रक्खे।

जगतराजी।

"चरखारी, जैतपुर, अजैगढ़, विजावर, सरीला"

महाराज जगतराज गद्दी पर विराजे, इनका पायतख़ जैतपुर हुआ। यह बड़े साहसी पराक्रमी तथा रणकुशल पुरुष थे। एकबार जैतपुर पर दलेलखां ने चढ़ाई की। इन्होंने मुक़ाबला किया किन्तु जख़मी हो जाने से यह मूर्छित हो कर रण क्षेत्र में गिर पड़े। सेना इनकी विकल गई तब इन की मझली रानी अमरकुवर खुद पीनस में सवार हो कर युद्ध स्थल से महाराज जगतराज को उठा लाईं। कुछ दिन में चंगे हो कर महाराज ने स्वयं अपने बरछे से दलेल के प्राण लिये उस समय का यह कवित्त है। रोप के पांव छता के बचा जगता दई सेल दलेल की छाती, तथा भूषण कवि कृत यह अमृत ध्वनि है,

प्रति भट उद् भट विकट जहां लरत लच्छ पर लच्छ। श्रीजगदेश भुआल तहां अच्छच्छवि परतच्छा अच्छाच्छवि परतच्छच्छटनि विपच्छच्छयकर। स्वच्छच्छित अति कीत्तिरथिर सु अभित्तिम भयहर। उज्झज्झहर रमुज्झज्झहर वितज्झज्झटपट। कुप्पप्प्रगट सो रुप्पप्पगति विलुप्पप्प्रतिभट।

महाराज जगतराज जी के १७ पुत्र थे यद्यपि गद्दी का हक़ जेष्ट पुत्र दिवान सेनापति, का था जिन की सन्तान में

ठाकुरान दलीपुर है। परन्तु महाराज उपरोक्त घटनानुसार कार्य्य से प्रसन्न हो मझली रानी अमरकुवर को वचन दे चुके थे इसी कारण उनके पुत्र कीरतसिंह को युवराज पद दिया और अपने पश्चात राज्य का हक्कदार रक्खा। इनके तीसरे तुत्र पहाड़सिंह चौथे केहरीसिंह जिसकी सन्तान में कुल पहाड़ टौरिया के बुन्देला हैं इसी खानदान में दिवान देसपत थे जो स० १८५७ में नागी वागी हो गये हैं। और इन्हीं के नाती दुर्गासिंह थे जो सन् १८९५ वा ९६ में वागी रहे हैं। पांचवें खेतसिंह, छठवें देवीसिंह सातवें दिवान बीरसिंह जिन की सन्तान में विजावर का राज्य है। आठयें फतेसिंह नववें खरगसिंह दसवें अर्जुनसिंह ग्यारहवें कल्यानसिंह दूसरे महल से बारहयें दमनसिंह तेरहवें कुवरसिंह चौदहवें हरसिंह पन्द्रहवें भगवन्तसिंह सोलहवें खांनज सत्रहवें मकुंदसिंह इन के अतिरिक्त और भी परदर्वारों के लड़के थे जिन से हमें यहां कुछ प्रयोजन नहीं है।

महाराज जगतराज का देहान्त मुकाम मउ में मिती पौष बदी ७ सम्बत १८१५ को हुआ। उस समय इनके तृतीय पुत्र पहाड़सिंह इनके निकट थे। इसलिये पहाड़सिंह पिता के मृतक शरीर को पालकी में रखकर जैतपुर ले आये और यह प्रसिद्ध कर दिया कि महाराज बहुत बिमार हैं और जब तक राज्य कर्मचारी तथा सेनापति को साम दाम दण्ड भेद से अपना न कर लिया तबतक जगतराज जी के देहान्त होने का समाचार प्रगट होने न दिया। निदान पहाड़सिंह ने रयासत जैतपुर को किसी प्रकार अपने कब्जे में कर लिया। इस समय दिवान कीरतसिंह का देहान्त हो गया था और

उनके एक पुत्र गुमानसिंह वा खुमानसिंह थे जब इन्हें।ने अजैगढ़ में राजा के मृत्यु का समाचार पाया तो वे अपना दल बल सज कर जैतपुर पर चढ़ आये। इनका सेनापति लालदिवान बड़ा चतुर था। परन्तु उसकी एक भी न चली और पहाड़सिंह ने सब को मार भगाया। तब गुमानसिंह नवाब बांदा के यहां सहायतार्थ गये और वहां से ससैन्य नवाब बांदा को जैतपुर पर चढ़ा लाये। किन्तु फिर भी वही फल हुआ और तब यह शान्ति होकर बैठ रहे। राजा पहाड़-सिंह महोबे में बीमार हुए, वहां से यह कुलपहाड़ गये और आगे परस्पर बंश नाश की आशङ्का से गुमानसिंह को वा खुमानसिंह को बुला भेजा और इस प्रकार रयासत बांटी कि तेरह लाख पचास हजार की आय का मुल्क रयासत जैतपुर में अपने पुत्र गजसिंह को दिया और १६२५००, का खुमानसिंह को जिस में अब चरखारी की रयासत है वर्तमान महाराजा मलखानसिंह जूदेव बड़े धर्मात्मा राजा हैं। कहते हैं कि आप स्वयं रात्रि में बेष बदल कर शहर की देखभाल किया करते हैं और हर प्रकार से जिस विषय में प्रजा की अरुचि हो उसे त्यागते हैं और प्रजा जो प्रसन्न करने का यत्न करते हैं। आप के पिता श्रीश्री रावबहादुर जुझारसिंह जूदेव रयासत का काम करते हैं।

और गुमानसिंह को ९२५०० की आय का मुल्क राजा पहाड़सिंह ने दिया जिन की संतान में अब अजैगढ़ का राज्य है। अजैगढ़ राज्य के वर्तमान महाराज का नाम सवाई महाराज श्री राजाधिराजा रंजोरसिंह बहादुर हैं आप वास्तव में बड़े बीर और हर फन ज्ञाता हैं आप क्षत्री ज्ञाति

का बड़ा आदर करते हैं। आप के तीन पुत्र है और २ नाती है सो बंश बृक्ष नम्बरी ४ में देखिये।

बिजावर ।

महाराज जगतराज के शाहकुंवर नाम स्त्री से एक बीरसिंह नामक पुत्र था जो कि जगतराज जी के जीवन समय में यह बीरसिंह जैतपुर में ही रहे और महाराज पहाड़सिंह के राज्य शाशन के समय में भी कुछ काल पर्य्यन्त जैतपुर ही में रहे। जिस समय गुमानसिंह खुमानसिंह से लड़ाई हुई तब भी यह जैतपुर में हरे थे। परन्तु फिर कुछ कारण वश इन की माता शाहकुंवर इन्हें लेकर ग्वालियर की ओर चली गईं और वहां से फिर लखनऊ आईं यहां कुछ दिन रह करके वृन्दाबन को गईं और वही पुत्र सहित रहने लगीं। इसी समय महाराज पहाड़सिंह का देवलोक हो गया और गुमान खुमानसिंह अजैगढ़ और चरखारी के राजा हो गये। तब गुमानसिंह ने अपने एक चचा को एसा आवारा फिरने में अच्छा न जान कर वीरसिंह को बुला लिया और मबई के पास अस्सी हजार की जागीर लगा दी। पर इस में वीरसिंह जी सन्तुष्ट न हुए और और भी हांथ पैर फैलाना आरम्भ किया। तब गुमानसिंह जी ने इन्हें परगना बिजावर जगीर में दिया और यहां भी नीतज्ञ बीरसिंह ने क्रमशः अपनी एक रयासत कायम कर ली। इनके पश्चात इनके पुत्र केसरीसिंह राज्यसिंहासन पर बैठे। इन से तीन पीढ़ीं पीछे महाराज लक्षमणसिंह के पुत्र महाराज भानप्रताप बिजावर के राज्यसिंहासन पर विराजे। इन्होंने करीब ५० वर्ष राज्य किया। यह बड़े पुन्यात्मा राजा थे और दानी भी एकही

थे । इसी दान पुन्य के खर्च में रयासत पर सरकारी कर्जा बहुत बढ़ गया और इन्तजाम में भी गड़बड़ पर गई । तब सरकार गवर्नमेण्ट ने रयासत को कोरट करके सुपरिन्टेन्डेन्टी कर दी परन्तु महाराज भानप्रताप जूदेव सुपरिन्टेन्डेन्टी होने के प्रथम ही कोई सन्तान न होने के कारण वर्तमान महेन्द्र महाराजा प्रतापसिंह जूदेव ओड़छांधिपति के द्वितीय पुत्र राव राजा साहब सावन्तसिंह जूदेव को गोद ले चुके थे निदान सरकार गवर्नमेण्ट ने भी यह गोद मंजूर की और बाद वफात महाराज भानप्रताप जूदेव के महाराज सावन्तसिंह को तिलक हुआ। वर्तमान महाराज सावन्तसिंह जूदेव बिजावराधिप अत्यन्त उदारचित सुने जाते हैं । आप बन्दूक चलाने में बड़े निपुण हैं यहां तक कि दुनाली से दोअन्नी उड़ा देते हैं । ईश्वर आप को प्रसन्न और प्रजापालन में दत्त चित रक्खे ।

सरीला ।

महाराज पहाड़सिंह के दो पुत्र थे एक का नाम गज सिंह जो रयासत जैतपुर का राजा हुआ और तिस से ५ को पीढ़ी में राजा पारिछत ने संवत् १९१४ तथा सन् १८५७ के गदर में सरकार ब्रिटिश गवर्नमेण्ट के विरुद्ध शस्त्र ग्रहण किया और इस कारण गिरफ़ार होकर आजन्म नजर कैद रहे और रयासत जैतपुर सरकारी अमलदारी ज़िला हमीर पुर में शामिल हो गई । राजा पहाड़सिंह के दूसरे पुत्र सरीला के राजा हुए पन्तु नवाब अली बहादुर बांदा ने जागीर सरीला तेईसिंह से खालसा करली परन्तु नवाब हिम्मत

बहादुर के समय में इन्हें ९००० की जागीर सरीला के कुर्वाे-जवार में फिरसे दी गई और फिर सरकारी अमलदारी होने पर जागीर सरीला फिर अपने पुराने ऊरूज को पहुंच गई। इस समय राजा पहाड़सिंह के पुत्र राजसिंहासन पर हैं (देखो बंश वृक्ष नम्बर ६)

जिगनी ।

महाराज छत्रसाल जी के पड़हारिन रानी से पदमसिंह नामक पुत्र हुआ था सो आप पढ़ही चुके। अब सुनिये। जब राज्य के हिस्से होने लगे तब राव पदमसिंह ने यहां अपनी गुजर न देख नाम मात्र हिस्सा न लिया। किन्तु इनके मामा का कोई पुत्र न था इस हेतु इन की माता के परामर्शानुसार इनके मामा पदमसिंह को अपने यहां ले गये और अपनी जागीर जो उस समय ९०००१० की थी पदमसिंह के नाम कर दी और बादशाही से सनद करवा ली। तब पदमसिंह जी ने अपने भाइयों को लिखा कि अब इधर पैर न देना अब हमारा राज्य जुदा है। इन पदमसिंह की औलाद में चार पीढ़ी यह जागीर रही। चौथी पीढ़ी में राव भुपालसिंह के कोई पुत्र न था इसलिये उन्होंने पन्नाधिप राजा नृपतिसिंह के कनिष्ट पुत्र लक्ष्मणसिंह को गोद लिया। परन्तु इनका भी कोई पुत्र न हुआ तब दिवान बहादुर गङ्गासिंह के पुत्र राज्य चरखारी से गोदी लिये गये। इन वर्तमान जागीरदार का नाम राव फतेसिंहजूदेव हैं। यह मिजाज के बड़े सादा और सान्त पुरुष हैं।

परिशिष्ट।

सम्पूर्ण पुस्तक समाप्त हो जाने पर जब मैं ने इसे श्री महाराज कुमार श्री दीवान सत्तरजीत जूदेव के सन्मुख पढ़कर सुनाई तो आप अत्यंत प्रसन्न हुए और आज्ञा दी कि इस पुस्तक में कुछ श्री प्राणनाथ जी का वृत्तांत भी होना चाहिये। तब मैं ने प्रार्थना की कि इस विषय में मैं बहुत कुछ तलाश करने पर भी कुछ न पा सका, इसी कारण इस बात की त्रुटि रह गई है। तब श्रीश्री दीवानसाहब ने आज्ञा दी कि हम जितना जानते हैं उतना बतलाते हैं और यह वार्ता सप्रमाण भी है। इसे हमने परिणामियों के ग्रंथ कुलजमसरूप में पन्ना में सुना है। निदान मैं यहां पर संक्षेप से प्राणनाथ जी का जीवनवृत्तान्त श्रीश्री दिवान सत्तरजीत जूदेव की वाणी के आनुसार लिखता हूं।

प्राणनाथजी की जीवनी।

गुजरात देश में, जामनगर नामक ग्राम में क्षेमजी नाम का एक धनाढ्य खत्री निवास करता था। इस के यहां लाद का वाणिज्य हुआ करता था। उसको धन वैभव सब कुछ था परन्तु कोई संतान न होने के कारण वह नित दुःखी रहता था। एक समय एक फकीर क्षेम जी के घर सौभाग्य बस आ पधारे और क्षेमजी की सेवा से प्रसन्न हो कर उन्हों ने आसिर्वाद दिया कि तेरे दो पुत्र होंगे 'एक तेरा एक मेरा' यें कह कर बाबा जी चले गये। क्षेमजी 'तेरा मेरा' का मतलब कुछ भी न समझो ईश्वरेक्षा से क्षेमजी को "मेहराज" और देव जी नामके दो पुत्र हुए। जेष्ठ पुत्र मेहराज जी का जन्म संवत १६७५ भांदी बदि १४ रविवार को हुआ था। यह एक प्रतिष्टत धनाढ्य पुरुष

के पुत्र थे इस कारण बड़े होने पर लोग इन्हें "मेहराज ठाकुर जी" कहा करते थे। इनके दो विवाह हुए। उनमें प्रथम स्त्री का तो नाम नहीं मालूम दुतिय स्त्री का नाम बाईजूराज था। अकस्मात प्रथम स्त्री का देहान्त हो गया इस कारण मेहराज ठाकुर जी को बड़ा दुख हुआ और इन के चित्त में उसी समय से संसार की असारता समागई और तभी से वह संसारिक व्यवहारों से निराले होकर साधुसेवा में तत्पर हो गये। एक समय वृन्दाबन के साधुओं की एक जमात आई। उन का प्रेम भाव देखकर मेहराज ठाकुर जी माता पिता से विदा होकर उसी जमात के साथ वृन्दा वन को चले गये। इनकी पतिव्रता स्त्री बाईजूराज भी इनके साथ हो लीं। वृन्दाबन में आकर श्री स्वामी हरिदास जी के स्थान टट्टियो में मंदिर की सेवा टहल करते हुए रहने लगे। इनका प्रेमभाव अधिक देख कर महंत जी ने एक दिन इन्हें श्री मूर्तियों की पूजा करने का अनुरोध किया। सो एक दिवस तो वह पूजा कर आए, दूसरे दिन जब पट खुले तो वहां मूर्तियों का पता भी नहीं। इस अद्भुत घटना से पंडे पुजारी महंत इत्यादि सब 'किंकर्त्तव्य विमूढ़,' होकर रह गए। उस दिवस किसी ने भोजन प्रसाद भी न किया–रात्रि को महंतजी को स्वप्न हुआ कि इस पुरुष से पूजा मत करवाओ यह बड़ा तेजस्सवी है। यदि वह न माने तो उसे हमारा पटका जामा दे दो। उसी की वह पूजा किया करे। निदान प्रातःकाल महंत जी ने वही किया और श्री मूर्तियों को अपने यथा स्थान पाया। इसीसे परिणामियों में जामा पटुका की पूजा होती है। मेह-राजठाकुरजी श्री भागवत् की कथा सुनने के बड़े प्रेमी थे। कुछ

दिन यह और वहां रहे फिर उन्होंने अपनी अर्द्धाङ्गिनी सहित देशाटन अरम्भ कर दिया—और मारवाड़ में (इनके पिता के यहां जो फकीर आये थे या जिसके वरदान से यह पैदा हुये थे वही) धनीदेवचन्द जी नाम योगी के चेले हुए और वहां से आप ने अपने शिष्य करना आरंभ किये। इनके चेलों में से कुछ लोग तो अपना घरबार छोड़ कर इनके साथ ही हो लिए। इस प्रकार जुड़े हुए शिष्यों को साथ लिये हुए (प्राण नाथ जी) मेहराज ठाकुर जी दक्षिण में पर्य्यटन करते हुए सतना हो कर पन्ना में आये। इन्हों ने आकर कुंड़िया नदी पर आसन जमाई। उस समय जो इस नदी का पानी पीता था तुरन्त मर जाता था। यह बात निपट सत्य है। इस कारण पंना नगर निवासियों ने बाबाजी को वहां ठहर ने से रोका परंतु उन्होंने एक भी न सुनी। आपने जलपान किया तथा सब शिष्यों ने भी और सब हट्टे कट्टे रहे। बाबा की यह करामात देख घर घर इस बात का चरचा होने लगा। निदान उस समय पन्ना नगर में स्थित मझलीरांनी दान कुंवरि स्वयं इन के दर्शन को आईं और बाईजूराज की शिष्या भी हो गईं। इसी से बाईजूराज को अपने ही निकट मझली रानी ने रक्खा और प्राणनाथ महाराज छत्रसालजी से मिलने के निमित्त मउ में आये। वहां पर जब महाराज से साक्षात हुआ तब प्राणनाथ जी प्रति महाराज ने निम्न लिखित प्रश्न किये।

"आत्मबोध उत्तरार्द्ध"।

दोहा—इच्छाते मोहित भयो बहुर इंद्र भयो सोय।
कोई काल लग तरानों जीव परी मह सोय ॥ १ ॥

आयौ कहां से जीव यह कहौ कोउ समझाय।
वृद्धि भई गुण तीनसौं पांचो तत्व बनाय ॥ २ ॥
जोगी जती तपस्वी सन्यासी जो कोय।
पंडित देव बताय के छत्रसाल कहैं जोय ॥ ३ ॥

इस प्रकार कह कर महाराज छत्रसालजी ने अपने खलीते में से पांच स्वर्ण मुद्रा गदेरी के बराबर बड़े जो इनको स्वप्न में प्राप्त हुए थे निकाल कर प्राणनाथजी को दिखाए और कहा कि इन सिक्कों की सानी मिलावे, सोई मेरा गुरु कहलावे, तब बाबाजीने अपने आसन के नीचे उसी प्रकार के सैकड़ों सिक्के दिखलाये और उपरोक्त प्रश्नों का उतर भी दिया, । फिर महाराज छत्रसालजी पन्ना में आये और यहां बड़े प्रेम-भाव से बाबाजी को रक्खा। एक दिवस प्राणनाथजी का न्यौता महाराज ने किया तो महाराज ने अपनी पगड़ी का और महारानी मझली रानी ने अपनी साड़ी का पावड़ा दिया। इसी से प्रसन्न होकर बाबा प्राणनाथ ने जो बरदान दिये सो हम लिखही चुके हैं। इस बिषय पर बहुत मनुष्य शंशय व तर्क वितर्क करते हैं। परंतु यह एक उनके बरदान का स्पष्ट प्रमाण है कि प्राणनाथजी का बरदान उनके ७ पीढ़ी तक हीरा निकलने को था सो सात पीढ़ी हो जाने पर अब हीरा बहुत छोटा और कतिपय पाया जाता है, जो कि न होने के बराबर है।

जिस समय प्राणनाथ जी महाराज छत्रसाल के प्रेमभाव से मग्न होकर पन्ना में निवास करते थे कि तब इनके दर्शनों के निमित्त मारवाड़ मेवाड़ गुजरात तथा दक्षिण इत्यादि देशों से इनके शिष्य दूर २ से आते थे। ऐसा ही एक लछीराम

नातरू सेठ यहां बहुत आया करता था। कहते हैं कि इसके पास पारसमणि थी। जब प्राणनाथ ने अपने जीवित ही अपना मकबरा बनवाने की आज्ञा दी तब लछीचंद ने सोनेका मकबरा बनवाना चाहा, परंतु महाराज छत्रसालजी ने निषेध किया कि एसा करना ठीक नहीं। संभव है की वह बहुत दिन लो न रह सके लालची लोग उसे नाश कर दें। इसलिये महाराज छत्रसाल जी ने तो मुकरबा बनवाया और लछीचंद ने उस पर सुवर्णका पंजा रखवाया। यह बहुत बड़ा पंजा है एकबार इसकी एक उगली टूट गई थी तो इसकी कीमत सवालाख रुपया अंदाज की गई थी।

संवत १७६० में इन (प्राणनाथ) जी की अर्द्धांङ्गी बाईजू राज का देहान्त हुवा। इनके यादगार में बंगला बनवाया गया था जो प्राणनाथ के मुकरवा से एक फरलांग के फासले पर पश्चिम ओर है। यहां केवल गादी है कलगी नहीं है।

तत्पश्चात संवत १७६५ में प्राणनाथजी के जिवित्त मेंही संवत १७६५ में, प्राणनाथजी का मकबरा अर्थात धांमस्थान बनवाया गया। इसके दो खंड हैं। एक वह जहां सेज लगी है और कलगी है–और उनकी बाणी का ग्रन्थ जिसमे १८०० चौपाई हैं रक्खा है। इस पुस्तक का नाम कुलजम स्वरूप है। और नीचे तलघर में अबतक उनका शरीर काठ के डोंडे में रक्खा है जो हर दिवाली को केवल हजूरी परिणामी वहां जाता है और तेल और पटरा का चोला बदलता है। और फिर वह द्वार बंद कर दिया जाता है।

संवत १७७१ असाढ़ बदि ३ दो घड़ी रात्रि गए प्राणनाथ जी ने समाधि साधी वे अपने समाप्त होने से प्रथमही छत्रसाल

जी को आपनी गादी पर बैठा गए थे। उस समय का यह दोहा है।

जा सोभा महराज की• हितकर दोनों राज ।
संबंधी तुम साथ की इनकी तुमकौ लाज ॥ १ ॥

प्रणनाथजी की अर्द्धाङ्गी बाईजूराज इनसे प्राणनाथ। प्राणनाथ !! कहा करती थीं इसी से इनका नाम प्राणनाथ पड़ गया था । प्राणनाथ जी का देहांत होजाने पर सब शिष्यों ने महाराज छत्रसालजी को अपने गुरु प्राणनाथ जी के सामना माना । बलकि परिणामी मतावलम्बियों का सिद्धान्त है कि छत्रसालजी की सेवा किये बिना मनुष्य मुक्ति पा ही नहीं सक्ता । कारण कि मुक्ति का दरवाजा छत्रसालजी के हाथ है—अब भी प्राणनाथ के शिष्य पूरणदास के पुत्र पौत्र महाराज छत्रसाल के मुकरबा का पूजन करते हैं ।

प्राणनाथजी के गुरु का नाम धनीदेव चन्दजी था सो तो हम लिखही चुके इनका जन्म मारवाड़ देश में अमरकोट स्थान में संवत १६३८ कुंवार शुक्ल चतुर्दशी को हुवा था और भादों सुदि १४ बुधवार संवत १७१२ को देवचंदजी समाप्त हुए । इनका मकबरा भी बाईजूराज के बङ्गले के पास है । यहां पर इनका देहान्त नहीं हुआ । परंतु प्राणनाथजी ने यह अपने गुरू की चिन्हारी के स्वरूप में बनवाया था ।

जामनगर में प्राणनाथ जी का जन्म होने से परिनामी जामनगर को नौतनपुरी कहते हैं और पन्ना में परलोक बास होने से पन्ना को पद्मावतीपुरी कहते हैं यहां अब भी सालाना गुजरात से सैकड़ों सेठ दर्सन करने आते हैं और लाख लाख रुपया चढ़ाते हैं । फालगुन सुदि पूर्णमा को होली पर यहां परिनामी पुरुषों का बड़ा समारोह होता है ।

इति शुभम् ।

बंशवृक्ष जागीर जिगनी

महाराजा छत्रसाल

रावपद्मसिंह

राव लक्ष्मणसिंह

राव हटेसिंह जी

राव पृथ्वीसिंह—दि:वखतसिंह

दिवान अर्जुनसिंह–दिवान जरावसिं–राव भोपालसिंह मजबूतसिंह–देवीसिंह

(दत्तक पन्नासे) राव लक्ष्मणसिंह सालमसिंह–दलीपसिंह–भगवानसिंह

राव फतेसिंह
वर्तमान रईरु

वर्तमान राव फतेसिंह जगतराजी रयासत चरखारी से दिवान गंगासिंहके पुत्र जागीर जगनी में ओली लिये गये ।

बंशवृक्ष रयासत पन्ना

राजा छत्रसाल

राजा हृदयसाह

सभासिंह पृथ्वीसिंह (साहगढ़)

राजा अमानसिंह, राजा हिन्दूपत, दि:खेतसिंह

राजा सरनेतसिंह, राजा अनरुद्धसिंह, धोकलसिंह

हरेंद्रसिंह किशोरसिंह

दि:बलभद्रसिंह महेन्द्रनृपतिसिंह हरवंसराय दि: देवीप्रसाद जगन्नाथ

महाराजारुद्रप्रताप लोकपालसिंह खुमानसिंह लक्ष्मणसिंह दि:गुमानसिंह हरेंद्रसिंह
(मृतरामराजा) (ओलीजिगनी)

राजा माधौसिंह यादवेन्द्रसिंह भारतेन्दुसिंह लोकेन्दसिंह

(पदच्युतराजा)

महेन्दयादवेन्दसिंह
(वर्तमान)

वंशवृक्ष तासपर छत्रपुर राज्य प्रमार कुल

महाराजपुण्यपाल प्रमार

[illegible]

कुंवर आलमशाह

हरेई सिंह, अर्जुनसिंह

कुंवरसैनेसाह, अमानसिंह

राजा प्रतापसिंह, कुंवरहिन्दूपत, दिः पृथीसिंह, कुंवरबखतसिंह, कुंवर हिम्मतसिंह

(दिवान कमोदसिंह, राजाजगतराज) (कुः प्रानसिंह दिः कुंजलसाह भगुनसिंह गोपासिंह) (जीतसिंह हरीसिंह सुजानसिंह)
(औरस) (दत्तक)

महाराज विश्वनाथसिंह, (दिः बलवन्तसिंह, राजाजगतराज दिःसत्तरजीत, लल्ला उमरावसिंह, लल्ला माधौसिंह, लल्ला पहाड़सिंह,)
(औरस)

(किशोरसिंह, केशरीसिंह देवीसिंह मोहनसिंह) श्रीमहाराज विश्वनाथसिंह कुंवर विजैसिंह, (लल्लाजझीराजा जुझारसिंह,) रघुबीरसिंह
(वर्तमान नरेश)

कुं० गोविन्दसिंह

कुंवर लल्लूराजा जवाहिरसिंह माधौसिंह

राजा छत्रसाल जी (बंशवृक्ष रयासत चरखारी)
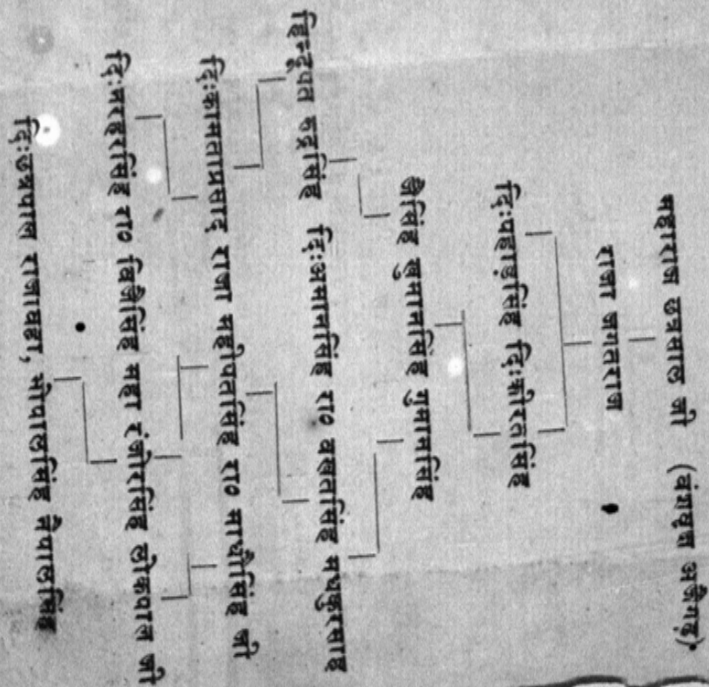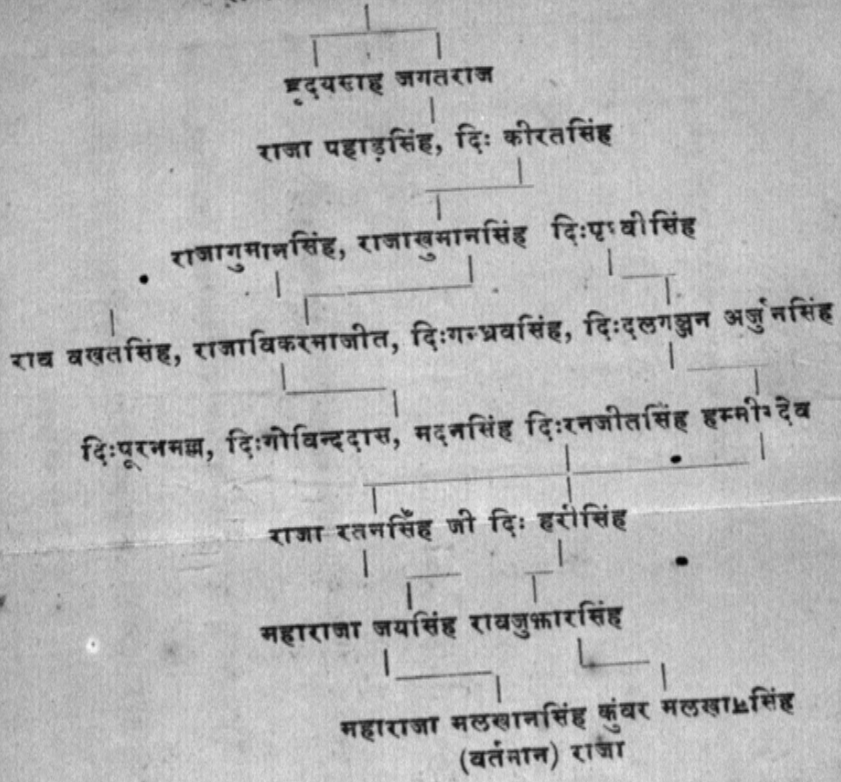
हृदयशाह जगतराज

राजा पहाड़सिंह, दिः कीरतसिंह

राजागुमानसिंह, राजाखुमानसिंह दिःपृथ्वीसिंह

राव बखतसिंह, राजाविकरमाजीत, दिःगन्धर्वसिंह, दिःदलगञ्जन अर्जुनसिंह

दिःपूरनमल्ल, दिःगोविन्ददास, मदनसिंह दिःरनजीतसिंह हम्मीरदेव

राजा रतनसिँह जी दिः हरीसिंह

महाराजा जयसिंह रावजुझारसिंह

महाराजा मलखानसिंह कुंवर मलखानसिंह
(वर्तमान) राजा

महाराज छत्रसाल जी (वंशवृक्ष अजैगढ़)

राजा जगतराज

दिःपहाड़सिंह दिःकीरतसिंह

जैसिंह खुमानसिंह गुमानसिंह

हिन्दूपत रुद्रसिंह दिःअमानसिंह रा० बखतसिंह मधुकरसाह

दिःकामताप्रसाद राजा महीपतसिंह रा० माधौसिंह जी

दिःनरहरसिंह रा० विजैसिंह महा रंजोरसिंह लोकपाल जी

दिःछत्रपाल राजावहा, भोपालसिंह नैपालसिंह

वर्तमान महाराज सावंतसिंहजी रयासत औरछा के महेन्द्र महाराज प्रतापसिंहजी के पुत्र हैं सन १८९८ में महाराज भानुप्रताप ने गोद लिया।